तृतीय अध्याय

प्रभाकर माचवे जी के प्रमुख नायिकाप्रधान उपन्यासों की नायिकाओं का चरित्र-चित्रण

`द्वामा` की नायिका आमा -

`एकतारा` की नायिका तारा -

`दर्द के पैबन्द` की नायिकाएँ वृत्ता एवं रीटा -

`लक्ष्मीबेन` की नायिका लेखा -

`कहाँ से कहाँ` की नायिका विभा ।

तृतीय अध्याय

` प्रभाकर माचवे जी के प्रमुख नायिकाप्रधान उपन्यासों की नायिकाओंका चरित्र - चित्रण --

प्रस्तावना --

चरित्र-चित्रण उपन्यास का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है। चरित्र-चित्रण उपन्यास में प्रभावोत्पादकता का संचार करता है। उपन्यास में चरित्र-चित्रण का सर्वाधिक महत्व स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि ,` यदि कथानक उपन्यास का मेरुदण्ड है, तो चरित्र-चित्रण उसका प्राण है।`[१] उपन्यास का प्रमुख विषय मानव और उसका चरित्र है। ` मानव एक पहेली है, दूसरों के लिए ही नहीं, प्राय: अपने लिए भी। उस पहेली को सुलझाने की, या उस रहस्य को खोलने की सायास या अनायास चेष्टा प्रत्येक उपन्यास में मिलती है।`[२]

उपन्यास के पात्र साधारण जनों की अपेक्षा अधिक स्पष्ट होते हैं। लेखक पात्रों को किन्हीं विशिष्ट परिस्थितियों में रखकर उन्हें देखता-दिखाता है। परिस्थितियाँ और जीवन-प्रसंग पात्र के उल्लेखनीय पक्ष को अधिक उजागर कर देते हैं।

मनुष्य के दो रूप होते हैं -- एक बाहरी, जो दूसरों को नजर आता है और दूसरा भीतरी, जो अव्यक्त रहकर पात्रों के क्रिया-कलापों में प्रतिबिम्बित हो जाता है। मनुष्य के इन्हीं दो रूपों को लक्ष्य कर पात्रों के चरित्र-चित्रण में बहिरंग तथा अंतरंग

---

१ डॉ.रामलखन शुक्ल - हिन्दी उपन्यास कला - पृ.क्र.२३।

२ गोविन्द त्रिगुणायन - शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त - द्वितीय भाग - पृ.क्र.४१९।

चित्रण की प्रणालियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं। अंतरग चित्रण के द्वारा पात्रों का सूक्ष्म एवं मनोविश्लेषणात्मक चित्रण किया जाता है।

प्रभाकर माचवे जी के उपन्यासों की नायिकाओं का अध्ययन करते समय यह बात उदित हो जाती है कि, इन नायिकाओं का चित्रण विशेषत: अंतरंग, प्रणालियों के आधार पर मनोविश्लेषणात्मक शैली में किया गया है। इन नायिकाओं के चारित्रिक पहलू उद्घाटित किए जा रहे हैं --

`द्वामा` की नायिका आमा --

आमा डॉ.माचवे जी के `द्वामा` शीर्षक उपन्यास की नायिका है। उपन्यास में वह एक परित्यक्ता नारी के रूप में पाठकों के सामने आती है। उसके पति श्री उससे विमुख हो चुके हैं, परिणामत: आमा के लिए जीवन शून्यवत हो चुका है। उसका मन पति,पत्नी, विवाह इस सारी संस्था से उचट गया है। पुरुष का नारी के प्रति निष्ठा रहित आचरण और नारी की दलित स्थिति को लेकर उसका मानस आन्दोलित रहता है। `क्योंकि उसका जीवन पुरुषों का विश्वास नहीं पा सका था।`[१] उपन्यास में आमा एक ऐसी नारी है जो समाज-व्यवस्था और विवाह-संस्था की श्रृंखलाओं में जकडी ,विवश और पुरुषों द्वारा प्रवंचित जिन्दगी जीती हुई अपनी जिन्दगी की बलि दे देती है। श्री, ललाम, सत्यकाम - सभी ने कभी उसके मन को तो कभी तन को छला है और उसे घुटन, तडपन और यातनाएँ देकर अकेला छोड दिया है। इस प्रकार आमा समाज व्यवस्था और विवाह संस्था की बेडियों में जकडी दीपशिखा की तरह चुपचाप जलती रहती है।

ललाम आमा का शैशव-साथी है। आमा के मन में ललाम के प्रति आत्मीयता, स्नेह और आकर्षण भी है। लेकिन वय-प्राप्त अवस्था में प्रेमी के रूप

---

१ डॉ.सुजाता - हिन्दी उपन्यासों के असामान्य चरित्र - पृ.क्र.२१३।

में आए प्रथम पुरुष ललाम के साथ उसके प्रेमसंबंध विवाह-संबंधों में परिणत नहीं हो पाते।

उन्नीस साल की उम्र में आमा का विवाह चित्रकार श्री से हो जाता है। विवाह के उपरान्त उनकी सुहाग-रात मनी लेकिन वह रात दोनों के मनों को परस्पर निकट लाने के लिए शायद कुछ न कर सकी, क्योंकि अपनी चौड़ी-चौड़ी बाहों में कसकर भर लेने को आतुर था, निरे पतिराज का पौरुष[१] वह नहीं जानता था कि आमा का मन इतना सरल नहीं, जो इतनी आसानी से बाँधा जा सकेगा। इसीलिए नारी को मात्र वासना तृप्ति का साधन समझनेवाला अरसिक श्री आमा को पहली रात ही नहीं सका था परन्तु वह भारतीय नारी थी और पतिनिष्ठा का पाठ पढाया गया था।'[२] आमा के पति, श्री अपनी शारीरिक प्यास बुझाकर 'प्रसन्न हुए, तृप्त और सुखी।'[३] लेकिन आमा के मन में पति के प्रति एक प्रकार का अविश्वास, एक तरह का डर-सा बस जाता है। यद्यपि आमा ने पुराण-कथाओं में पढा है, बुजुर्गों से भी सुन रखा है कि 'पति देवता है। ब्याहता का सब कुछ उसी के लिए है .... उसी एक के लिए।'[४] लेकिन फिर भी वह एक बात नहीं समझ पाती कि,' यह पति क्या है, जो एकदम अपरिचित होकर, देह के इतने निकट आने का शास्त्रबद्ध आग्रह करता है। यह क्या है पति ? .... क्या पति ऐसे ही निर्दयी निठुर, संगदिल आदमी को कहते हैं ? ..... क्या यही है मेरे मन का देवता ?'[५] इसी समय आमा को ललाम से संबंधित एक घटना की याद आती है। उसे बरसात की फिसलन में ललाम ने उसका हाथ पकडकर गिरने से बचाया था। और वही' आमा का नव-वय का प्रथम पुरुष-स्पर्श था। परन्तु आज भी उसकी स्मृति मादक और सोंधी मिट्टी की भाँति मन को जैसे व्याप लेती है।'[६] ललाम के अभाव

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - द्वाभा - पृ.क्र.६३।
२ डॉ.सुजाता - हिन्दी उपन्यासों के असामान्य चरित्र- पृ.क्र.२१३-१२४।
३ डॉ.प्रभाकर माचवे - द्वाभा - पृ.क्र.६३।
४ - वही - पृ.क्र.६३।
५ - वही - पृ.क्र.६३।
६ - वही - पृ.क्र.६४।

से शून्य हृदय तथा श्री के उसके मन के प्रतिकूल आचरण के साथ वह समझौता करके चलती रहती है। लेकिन श्री के जीवन में एकनिष्ठ होने की भावना का अभाव था। वह प्रभरवृत्ति का पुरुष था। वह श्यामा नामक सुन्दरी से आकर्षित होकर विवाह के पाँच ही साल उपरान्त अपनी पत्नी और तीन बरस की फूल-सी कोमल बच्ची को छोड चला जाता है। परित्यक्ता आभा कॉलेज में अध्यापिका का काम करने लगती है।

' पाँच वर्ष के लम्बे अन्तराल के बाद उलझन भरे दाणों में एक दिन उसके जीवन में भले-से लगनेवाले सत्यकाम ने प्रवेश किया।'[१] वह आभा को विवाह का झूठा आश्वासन देकर उसका समर्पण स्वीकार करता है। आभा सत्यकाम के पुत्र की माँ बन जाती है, जिसकी बाद में मृत्यु होती है। लेकिन सत्यकाम आभा का पूर्वचरित्र सुनने के बाद उसे उतरन समझकर उसे छोडकर विदेश चला जाता है। श्री और सत्यकाम के इस निष्ठा-रहित आचरण के आघातजन्य मानसिक विक्षोभ की प्रतिक्रिया आभा के शरीर पर होती है। वह क्षय की रोगिणी बन जाती है। साथ ही इन पुरुषों से प्रवंचित होकर समाज की प्रताडना एवं निन्दा की शिकार हो जाती है।

आभा तुलसी के इस वचन को - ' साँप,घोडा,स्त्री,राजा,नीचा आदमी और हथियार इन्हें नित्य परखते रहना चाहिए। पलटते देर नहीं लगती '[२] याद करके कहती है कि जो पुरुष उसके जीवन में आये, वह सब इतने नीच तो नहीं थे। श्री ने मीठे-मीठे आश्वासन दिए थे, मिसरी और शहद से भरे पत्र लिखे थे, उसके जीवन में शरद की निर्मल चाँदनी और सियाले की नरम धूप जैसी सुखदता फैलायी थी,लेकिन बाद में सब भूल गए। इसीलिए आभा पुरुष जाति के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए कहती है, ' स्त्री के साथ यह सलूक आज से नहीं, राम और दुष्यन्त,और नल और बुद्ध के जमाने से चला आ रहा है। सीता पर कलंक लगाने के लिए रावण का बहाना भी हो सकता है पर शकुन्तला को भूल जाने का और दमयन्ती को जंगल में छाया-सी छोड जाने का क्या कारण था ? .....'[३]

---

१ डॉ.सुजाता - हिन्दी उपन्यासों में असामान्य चरित्र - पृ.क्र.२१४।

२ डॉ.प्रभाकर माचवे - छाभा - पृ.क्र.६९।

३ - वही - पृ.क्र.६९-७०।

उपन्यास में आभा हमेशा ` पुरातन और नवीन मान्यताओं के बीच मँजधार में नौका की भाँति डोलती रहती है।` [१] वह किसी भी एक विचारधारा का निर्द्वंद्व रूप से पालन नहीं कर पाती है। दो विभिन्न विरोधी विचार-प्रवाह उसमें कार्यशील रहते हैं। जो आभा मनु की ये पंक्तियाँ ---

` विशील: कामवृत्तो वा गुणैर्वापरिवर्जित:
उपचर्य: स्त्रिया साध्या सततं देववत्पति `[२]

पढकर गुस्से से किताब दूर फेंक देती है, वही आभा प्रतिदिन अपने पतिदेव के फोटो की अगरबत्तियाँ जलाकर पूजा करती है। इस प्रकार वह अपने उस पति के प्रति अपना कर्तव्य निभाती है, जो उसे एक कन्यारत्न प्रदान करके, निर्दय बनकर उसे उतरन की भाँति छोड गया है। आभा की माता ने उसे बचपन में तुलसी के चत्वर के पास पूजा करना सिखाया था। पूजा करते समय माँ ने यह पाठ भी पढाया था कि, ` पूजा कर्तव्य भावना से की जाती है .... सकाम पूजा का कोई फल नहीं होता।`[३] आभा अपने बचपन के इन संस्कारों को दोहराती है। लेकिन दूसरे ही क्षण आभा के मन में क्षीण विद्रोह की भावना निर्माण होती है कि` इस निष्प्राण तस्वीर को मैं अभी तक पूजती आ रही हूँ ?[४] इसी आवेश में वह सोचती है कि, इस प्रतिमा को क्यों न उठाकर फेंक दूँ ? यह सब पूजा-अर्चा, यह सब युग-युग का छलावा, यह जन्म-जन्मान्तर की प्रवंचना, यह एकतर्फा, प्रत्याशाहीन, प्रतिदान रहित, निरंतर देते ही जाना .... क्यों ? आखिर क्यों ? क्या नारी और नदी की यही एक-सी गति है ? ` शुधू दाओ .... शुधू दाओ` ... उसके लिए लौटना मना है।[५] आभा का यह विद्रोह स्वाभाविक ही है, क्योंकि श्री का आचरण उसके मन के प्रतिकूल होते हुए भी उसने अपने वैवाहिक जीवन में समझौता करके पतिनिष्ठा निभायी थी। लेकिन प्रतिदान के रूप में उसे श्री से प्रवंचना, छल और यातनाएँ ही मिलती हैं।

---

१ सुषमा धवन - हिन्दी उपन्यास - पृ.क्र.२७० ।

२ ` दुश्शील, कामी या दुर्गुणी कैसा भी पति क्यों न हो, साध्वी स्त्री को सतत पति को ईश्वर मानकर पूजना चाहिए।`
डॉ.प्रभाकर माचवे - छाया - पृ.क्र.९ ।

३ डॉ.प्रभाकर माचवे - छाया - पृ.क्र. ११ ।
४ - वही - पृ.क्र. ११ ।
५ वही पृ.क्र. ११-१२ ।

`श्री का श्यामा के चक्कर में फँस आभा का परित्याग उसके भावुक मन को पीड़ित कर गया। अपने बुद्धि-तर्कों द्वारा वह श्री को यद्यपि अपने मानस से दूर कर स्वस्थ होना चाहती थी पर उसका अचेतन तो श्री को लेकर ही उलझा रहता था।`[१] इसीलिए अपने जीवन के अंतिम क्षणों में वह सशब्द होकर कहती है,` पर मेरे मन में बेबी के पिताश्री श्री तस्वीर वैसे ही अंकित है जैसे कोई भित्ति-चित्र हो। वह मौसम और बेमौसम की आँखों की बारिश से नहीं धुलता। वह धुंधुआ जरूर गया है।`[२] आभा अपने जीवन-काल में अन्त तक प्राचीन संस्कारों से मुक्त नहीं हो पाती। इसीलिए इतनी यातनाएँ सहकर, प्रियतम से छूटी जानेपर भी उसकी प्रतिमा अपने मन में वैसी ही सँजोकर रखती है। जीवन की अन्तिम घड़ियों में वह कहती है, तुम्हारा मेरे जीवन में अभी अर्थ शेष है। तुमसे एक बार मिले बिना मेरी तपस्या पूरी नहीं होगी।`[३] आगे वह फिर कहती है,` तुमने मुझे ठुकरा दिया, फिर भी मैं मन के सात परदों के भीतर तुम्हारी स्मृति पालती आयी हूँ। अब जब कि जीवन की ज्योति हो रही है ..... मुझे तुम्हारी स्मृति उद्वेलित करती है।`[४]

अध्ययन और अध्यापन के दौरान आभा बार-बार प्राचीन ग्रंथों में प्रतिपादित नारी की स्थिति और पुरुष को लेकर उलझती रहती है। प्राचीन काल में मनु ने स्त्री, शूद्र आदि पर जो निर्बन्ध डाले थे, उनसे आज भी इनकी पूरी तरह से मुक्ति नहीं हुई है। आभा इस सम्बन्ध में सोचते हुए कहती है कि, इन दुष्प्रवृत्तियों का कहीं अन्त नहीं होता। मानव कितना भी सुसंस्कृत और प्रगतिशील क्यों न हो, फिर भी वह विवेकहीन बनकर विकृतियों का अंधानुकरण करता चला जाता है। मनु ने नारी और शूद्रों के प्रति जो अन्याय किया है, उसका आज समाज के सभी ओर से धिक्कार किया जाता है। लेकिन एक ओर जहाँ इक्कीसवीं सदी में नारी मुक्ति, स्त्री-शिक्षा की घोषणा बड़े जोर-जोर से की जाती है, लेकिन दूसरी ओर

---

१ डॉ.सुजाता - हिन्दी उपन्यासों में असामान्य चरित्र - पृ.क्र.२१४।

२ डॉ.प्रभाकर माचवे - छाया - पृ.क्र.९३।

३ - वही - पृ.क्र.९६।

४ - वही - पृ.क्र.९५।

भारतीय समाज में आज भी ऐसे कई पुरूष हैं, जो नारी के साथ उसी तरह हीनता का बर्ताव करते हैं। युगों-युगों से चलते आए इन अत्याचारों का अन्त अभी नहीं हुआ है। इन लोगोंपर मनु के रूढिवादी संस्कार छाए हुए हैं। इस लिए आभा कहती है, ' मनुमहाराज ! धन्य हो ..... वीसवीं सदी में भी कई महाभागों के दिमाग के अवचेतन में आप किसी अमीर की कोयला बनी अशर्फियों पर पहरा देने वाले बूढे साँप की तरह फन फैलाये बैठे हो। ओ रूढियों के अंध आदि देवता ! तुम अनंत हो।[1]...

' प्रथम दर्शनजन्य प्रेम के सम्बन्ध में सोचते हुए आभा कहती है, ' यह प्रथम दर्शन वाला प्रेम, यह निरी देहासक्ति, यह मूलत: पाशवी, अदम्य, विकार क्या इतने हजार वर्षों की ' संस्कृति ' के बाद भी मनुष्य का विकार प्रदर्शन ज्यों का त्यों बचा रहा है ? .... क्या बुद्धि की हवा ने उस आग को लहकाया भर है ? फिर क्यों मनुष्य अपने-आपको संस्कृत कहता है ? '[2] प्रथम दर्शनजन्य प्रेम का शिकार बनकर ही पुरूष नारी से अपनी शारीरिक भूख की तृप्ति कर लेता है और वासना की यह आँधी थम जाने के बाद उसे प्रवंचित कर छोड देता है। इसीलिए आभा इस प्रेम को मूलत: पाशवी तथा निरी देहासक्ति कहती है।

आभा आदिमकाल के समाज के नीति नियामकों के सम्बन्ध में कहती है, ' आदिमकाल के समाज की व्यवस्था के ठेकेदार, ये स्मृतिकार और ये नियम बनाने वाले अपनी ही सुविधा को देखते आ रहे हैं और स्त्री को धीरे-धीरे अपनी नियमों की शृंखलाओं में बाँधते चले आ रहे हैं .... वे समाज के नीति-नियामक कहलाए। और ये लदा-लदा वर्तिकाएँ, वे दीप-शिखाएँ, चुपचाप जलकर भस्म की ढेरी बन गयी। '[3] इस प्रकार ये नियम और शृंखलाएँ सिर्फ नारी के लिए गढी गयीं और पुरूष जाति को उससे छूट मिली। इस लिए आभा श्री से सवाल करती है कि , ' क्यों ऐसा होता

---

१ डॉ. प्रभाकर माचवे - द्वाभा - पृ.क्र.७।

२ - वही - पृ.क्र.२०-२१।

३ - वही - पृ.क्र.९४।

है कि समाज में खुले माथे से प्रतिष्ठा और गौरव से लदे वे लोग घूमते हैं, जो स्त्रियों के साथ जिम्मेदारी का व्यवहार नहीं करते, जो नारी को निरा खिलौना समझते हैं -- और पापिनी कहलाती हैं बेचारी स्त्रियाँ।'[१] आभा अपने निजी अनुभवों के आधारपर ऐसा कहती है। क्योंकि श्री के उसे छोड जाने के बाद वह अपने मन को वश में रखने की लाख कोशिश करनेपर भी उसमें असफल होती है और सत्यकाम को अपना समर्पण दे बैठती है। इसप्रकार अन्ततः उसे समाज की प्रताड़ना और निन्दा सहनी पडती है। लेकिन श्री एक पुरुष होने के कारण अपनी भ्रमरवृत्ति से वह कितनी ही स्त्रियों के मोहजाल में फँसता है। लेकिन फिर भी समाज उसे पुरुष होने की वजह से दोषी नहीं ठहराता। इसलिए आभा पूछती है ,' क्या पाप और पुण्य के बटखरे हमारे देश में स्त्री और पुरुष के लिए अलग अलग हैं ?'[२]

आभा अपने अन्तिम दिनों में श्री से लिखे पत्र में कहती है कि,' दुनिया का सारा दुःख इसलिए है कि हमने मूल,आद्या,सृजन-शक्ति,मातृत्व की अवहेलना की है। वह जातियाँ और धर्म - पंथ अवश्य नष्ट हो जायेंगे जिन्होंने नारी के साथ,आदिमाता के साथ इस तरह की उपेक्षा और प्रताडना का व्यवहार किया इतिहास इसका साक्षी है। सभ्यता का इतिहास उत्तरोत्तर नारी को स्व-स्थान दिलाने का इतिहास है।'[३] लेकिन खेद के साथ यह कबूल करना पडता है कि, आज जब हम भौतिक प्रगति की होड में आगे बढ़ रहे हैं, तभी दूसरी ओर सभ्यता और संस्कृति का इतिहास भूलते जा रहे हैं।

आभा ने स्वयं परित्यक्ता होने की वजह से समाज में परित्यक्ताओं का स्थान और स्थिति अनुभव की है। इसीलिए वह श्री के सामने यह सवाल उठाती है कि,' क्या मुझ जैसी परित्यक्ताओं के लिए समाज में कोई स्थान नहीं है ?'[४]

आभा नारी जीवन के बारे में सोचती है कि, क्या नारी का जीवन कोई

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - आभा - पृ.क्र.९४।

२ - वही - पृ.क्र.९४।

३ - वही - पृ.क्र.९५-९६।

४ - वही - पृ.क्र.९४।

अंधी गली है ?` नारी क्या` नियतिनटी` के मनमाने खेल की शिकार है ? निरी एक कठपुतली ।`[१] जो भी चाहे वह उसका अपने ढंग से इस्तेमाल करें ? आभा के जीवन में आए पुरुषों ने मनमाने ढंग से अपनी वासनापूर्ति के लिए उसका उपभोग कर लिया । और अन्ततः इनसे छली जाने के कारण समाज की निन्दा की शिकार वही बनी, न कि वह पुरुष । यह यद्यपि उसकी यह बात भी सही है कि उसकी इस स्थिति के लिए पूर्णरूप से वही जिम्मेदार नहीं है । वह श्री से पूछती है कि,` क्या मेरे जीवन की वेदना की उत्तरदायिनी केवल मैं हूँ ।`[२] आभा अत्यन्त असहाय और विवश स्थिति में यह सवाल करती है । लेकिन जब वह श्री द्वारा प्रवंचित होती है, तब फिर वह सत्यकाम से आकर्षित होकर आग के शोलों से भरी खाई में कूद पड़ती है, और एक दर्दभरा अनुभव फिर एक बार लेती है ।

अपने जीवन में मिली पीडा का कारण ढूँढते हुए वह कहती है,` क्यों है यहाँ, वहाँ सब ओर इतनी पीडा ? इतना दर्द ? इतनी वेदना ? .... क्या उससे कोई निस्तार नहीं है, उबार नहीं है ? किसने यह जीवन दुकूल इतना मैला बना दिया है ? कौन है उसका निर्माता और उसका समेटनेवाला ? ..... शायद हम ही इस दर्द के, सृष्टा और शास्ता हैं ।`[३] आभा को उसके जीवन में जो पीडा मिली उसके लिए उसी के कर्म जिम्मेदार हैं । वह अपने जीवन में किसी का अवलंब पाना चाहती है, सहारा चाहती है । वह स्वयं-निर्भर होने की कोशिश नहीं करती । आभा के लिए अपनी रोशनी होते हुए भी किसी बाहर की रोशनी की खोज में वह है । इसीलिए वह द्वंन्द्व की शिकार बनकर घुल-घुलकर मर जाती है । उसके शारीरिक रोग से वह तन्दुरुस्त बन भी जाती, लेकिन वह मानसिक रूप से रोगग्रस्त हो जाती है, जिसका इलाज उसके सिवा किसी अन्य बाहरी व्यक्ति से होना असंभव था । आभा की स्थिति दो नावों में सवार यात्री की तरह हो जाती

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - द्वामा - पृ.क्र.५ ।

२ - वही - पृ.क्र.९४ ।

३ - वही - पृ.क्र.१५ ।

है। एक ओर जहाँ वह पुरातन मान्यताओं की समर्थक बन जाती है, वही वह इस अन्याय के खिलाफ विद्रोही वृत्ति अपनाकर स्वयंसिद्धा होना चाहती है। लेकिन दोनों में से किसी एक प्रवृत्ति को न अपनाने के कारण आभा द्वंन्द्व की शिकार बन जाती है। डॉ. माचवे आभा के चरित्र के माध्यम से नारी की दुहरी प्रकाश स्थिति स्पष्ट करना चाहते हैं।

निष्कर्ष --

आभा के जीवन में आए पुरुष उसका, अपनी शारीरिक कामपूर्ति के लिए उपभोग कर उसे यातनाओं में तड़पाते अकेला छोड़ चले जाते हैं। भारतीय समाज में ऐसी स्थिति में सारा दोष निर्दोष होते हुए भी नारी पर मढ़ा जाता है। और ये पुरुष बार-बार अपनी भ्रमरवृत्ति का प्रदर्शन करने के बावजूद भी उजले माथे से घूमते रहते हैं। युगों-युगों से नारी पुरुष जाति के इस अन्याय की शिकार बनती आयी है। ` द्वाभा ` की नायिका आभा भी इसी अन्याय की शिकार बनी है। वह ऐसे पुरुषों के खिलाफ एक ओर विद्रोह का स्वर उठाती है लेकिन दूसरी ओर वह विवशतावश प्राचीन संस्कारों में जकड़ कर उसी पति की पूजा करने जाती है। इसप्रकार वह अन्तर्द्वन्द्व का शिकार बनकर अपनी यातनाओं से छुटकारा नहीं पा सकती।

` एकतारा ` की नायिका तारा ` --

तारा प्रस्तुत उपन्यास की प्रमुख स्त्री पात्र है। उपन्यास में कथा का केन्द्रबिन्दु तारा है। उपन्यास की नायिका तारा समाज में आदर्श समाजवाद की स्थापना करना चाहती है। समाजवाद समता का हामी है। अत: वह चाहता है कि, स्त्री को भी पुरुष के साथ समान अधिकार एवं स्वतंत्रता मिले। तारा इस आदर्शवादी विचारों के अनुसार यह प्रश्न उठाती है कि, ` पुरुष यदि अकेले रह सकते हैं, तो नारी क्यों नहीं रह सकती ? इसी प्रयोग में वह टूटती जाती है। उसी ` अकेले रहने की प्रक्रिया ` के आचरण में उसपर मुसीबत पर मुसीबत टूटती है। चूँकि

सन ४२ का समाज और आज ४८ वर्ष बाद भी भारतीय समाज 'पुरुष-प्रधान' ही है। वह आदर्श समतावादी समाज नहीं बन सका।'[१] यद्यपि आदर्श का निर्माता मनुष्य ही है, फिर भी वह अपनी कमजोरियों को टालना नहीं चाहता, उसी तरह दोहराता जाता है, इसीलिए आदर्श की सही अर्थ में स्थापना नहीं हो सकती।

उपन्यास की नायिका तारा उच्चविद्या विभूषित संपन्न परिवार की बेटी है। अजनबी गायक के आइने से स्पष्ट है कि, तारा अनिंद्य सुंदरी है। उसके बाल लम्बे हैं, तनुयष्टि सुकुमार एवं कमनीय। वह अपने पिता की प्रथम पत्नी से एकलौती बेटी है। व्यक्ति के इतिहास में उसका बाल्यकाल बहुत ही महत्व रखता है, उसके व्यक्तित्व के निर्माण में बचपन का काल बहुत ही महत्व रखता है। लेकिन तारा के बचपन में ही क्रूर नियति ने उससे माँ का प्यार भरा आँचल खींच लिया है, जिसके कारण तारा माँ की ममता से वंचित होकर, भीड-भरी दुनिया में बेहद अकेलापन महसूस करती है। तारा को घर में सभी प्रकार के भौतिक सुख प्राप्त हैं। विमाता के बच्चे, छोटे भाई-बहन भी हैं, लेकिन नहीं है सिर्फ वह एक चीज, जिसे कहते हैं दिल की सुबकन को दिलासा देकर थपकाने वाले प्यार का स्पर्श। तारा अनेक ताराओं से घिरी है, पर अकेली है। कोलाहल से भरी नगरी उसके पैरों तले बिछी है, पर वह उनसे दूर है।'[१] तारा की बहुत छोटी उम्र में ही, माँ का अस्पताल जाना और वहाँ से गायब हो जाना अभी तक उसके मन में यों कसकता है, जैसे किसी ने लोहे की गर्म सलाई से स्मृति के बदन पर अमिट निशान आँक दिया हो। मन का वह जला हुआ अंश फिर नहीं भर सका।[२] इसप्रकार के माहौल में भी तारा को अभिशाप है कि, वह स्थिर रहे, टूटे नहीं।

तारा के व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण पहलू है, उसका देश के प्रति अटूट प्रेम। देशप्रेम की धुन में पागल होकर ही वह अपनी एम.बी.बी.एस.की शिक्षा अधूरी छोड घरवालों का विशेषत: विमाता का सख्त विरोध होते हुए भी, बयालीस के आन्दोलन में क्रांतिकारी दल की सदस्या बनी। बयालीस की क्रांति में वॉरंट आनेपर तारा को

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे का पत्र, परिशिष्ट क्र.१।
२ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.६।
३ - वही - पृ.क्र.६।

रात रात भर घर से बाहर रहना पड़ता है। उसकी विमाता को उसका यह बर्ताव बिलकुल पसंद नहीं था। वह अपनी पति से कहती, ` यों रोज-रोज का अपनी बेटी का बाहर रात-रात भर रहना हमें कहीं मुँह दिखाने लायक नहीं रहने देगा। आपकी बेटी बड़ी देशभक्तिन है तो हो, यहाँ घर में रहना हो, तो घर के सलीके से ही रहा जायगा।`[१] माँ की बातों में आकर पिताजी अपने व्यवसाय की सुरक्षा हेतु तारा को अपने घर में रखने में अपनी असहायता दर्शाते हुए तारा को घर से निर्वासित कर देते हैं। तारा यह जानती थी कि संग्राम से छिपकर उस बँगले की आड का रास्ता पलायन का रास्ता था। वह क्रांति के लिए अपना उठा हुआ कदम पीछे हटा लेकर अन्य साथियों से बुजदिल कहलाना बुरा समझती थी। इसीलिए वह घर का त्याग करके देशप्रेम के लिए बहुत बड़ी कीमत चुकाती है।

तारा का देशप्रेम उसके सहेली को लिखे खत में भी दृष्टव्य है। वह उसे लिखती है, ` एक दीपक है, जो निरन्तर स्नेह से अन्दर ही अन्दर जलता रहता है और अखंड जलता रहेगा - और वह हमारी बन्दिनी माँ को मुक्त करने की प्रतिज्ञा की निष्कंप लौ से अनुप्राणित है। लाख आँधियाँ आए, वह जलता रहेगा। उस बड़े प्रेम, सारे देश प्रेम के बाद कौन से प्रेम का अर्थ बचा रहता है। ये छोटे-छोटे महत्व सभी उसमें जा कर लय हो जाते हैं।`[२] तारा के सामने देश के लिए स्वतंत्रता प्राप्त करने का एकमेव उद्दीष्ट है। अत: उसके सामने उसे दीवाली भी अमावस के समान ही है। `[३] देश प्रेम के सामने उसे व्यक्ति और व्यक्ति के बीच का प्रेम भी फीका लगता है।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.२०।

२ - वही - पृ.क्र.४३।

३ ` यहाँ हमारे राष्ट्र का दीपक सीखचों में बन्द है, और इसलिए हमारे लेखे दीवाली भी निरी अमावस ही है। `
डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.४३।

तारा अपने आदर्शों के लिए समाजवाद के प्रेम की खातिर गृहत्याग करती है। आश्रय लेने का प्रश्न उपस्थित होता है, तब उसे अपने समाजवादी साथी सुरेश की याद आती है। ' सुरेश से उसे बहुत आशा थी। अगर सारे दल में जयन्त के बाद किसी को वह मानती थी, तो सुरेश को। उसकी चारित्रिक दृढता पर उसे बहुत भरोसा था।'[१] इसी भरोसे पर वह सुरेश के पास अपना दुखडा हलका करने के इरादे से जाती है, लेकिन ' मनसा चिंतिते कार्य देवमन्यत्र चिन्तयेत्। ' अपने मन तक तो तारा जिम्मेदार थी, विधाता के मन में जो कुछ ' और ' था, उसे वह नहीं जानती थी।'[२] वह देखती है कि, सुरेश किसी अभद्र महिला के साथ शराब पीकर अश्लील हरकतें कर रहा है। उसके मन में यह सवाल उठता है कि, क्या यही वह सुरेश है, जो उस दिन ' समाजवाद और नीतिशास्त्र ' पर लंबा-चौडा व्याख्यान दे रहा था। तारा के मन में प्रश्न उठता है कि, जो सुरेश उर्वशी के साथ इस तरह पेश आ सकता है, वह उसके साथ किस प्रकार का बर्ताव करेगा। तारा को उसकी माँ का कथन याद हो जाता है कि,' पुरुष के प्रेम के संगीत के कई तरह के साज होते हैं, स्त्री का प्रेम एकतारे की तरह है। उस एक तार को तोड दो, तो काठ क्या रहेगा।'[३] तारा के मन में स्त्री-पुरुष की नैतिकता की कल्पना के संबंध में द्वंद्व निर्माण होता है। वह कहती है कि, स्त्री के प्रेम को जो एकतारे की उपमा दी गई है, क्या वह सही है ?' क्या स्त्री वीणा नहीं है ? क्या काठ का भी वाद्य नही बनता ?' [४]

जयन्त समाजवादी दल का प्रमुख नेता था। तारा उसे आदर्श पुरुष मानती थी। वह कहती थी,' दुनिया के सब पुरुष धोखा दे दे, पर जयन्त वैसा नहीं है।'[५]

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.२४।
२ - वही - पृ.क्र.२५।
३ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा पृ.क्र.२२।
४ - वही - पृ.क्र.२८।
५ - वही - पृ.क्र.२९।

इसलिए घर से निर्वासित तारा जयन्त के पास आश्रय लेती है। लेकिन यही जयन्त हिमांशु के कथन पर विश्वास करके तारा पर सन्देह व्यक्त करता है, जो कहा करता था कि, नारी के प्रति भोग्या का-सा भाव रखना सामंत-कालीन दृष्टिकोण है,आज नारी मुक्त है आदि आदि। जयन्त भी उसे यों कहकर - 'मैंने अपने कठोर,भाग-दौड जीवन में, यह सुखद नारी-स्पर्श न जाने कितने वर्षों में अनुभव किया है। कल सबेरे ही मैं चला जाऊँगा,फिर पता नहीं, तुम मिलो, न मिलो ....'[१] तारा से शारीरिक सुख की प्राप्ति करने का प्रयास करता है। तारा के मन में जयन्त की जो आदर्श प्रतिमा थी वह टूट जाती है। वह सोचने लगती है कि सुरेश भी तो उर्वशीसे यही कह रहा था।'[२] तारा के मन में इस प्रसंग की प्रतिक्रियास्वरूप प्रश्न उठते हैं कि क्या सब पुरुष स्त्रियों को डरा-धमकाकर जीतना अपनाना चाहते हैं? ' क्या नारी आज के समाज में या कभी भी अकेली नहीं रह सकती ? '[३]

भारतीय समाज व्यवस्था में स्त्रियों के संबंध में यह रूढि गत मान्यता है कि, 'स्त्री का जब तक विवाह नहीं होता, तब तक वह पिता की, विवाह होने पर पति की और पति के मरने पर पुत्र की सम्पत्ति है।'[४] लेकिन तारा ने इन प्राचीन रूढियों के खिलाफ आवाज उठाने की ठान ली है। अत: वह इस प्रकार की मान्यताओं को धिक्कारते हुए कहती है,' छि: ऐसी संस्कृति पर जहाँ स्त्री को ढोल,शूद्र,दास और पशु की भाँति एक अधिकार में रखने योग्य वस्तु मान लिया गया है ? '[५] वह सभी

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.३३-३४।

२ ' तुम जानती हो, हम क्रांतिकारियों का क्या भरोसा है ? कल हमें सरकार फाँसी पर लटका देगी और तुम बाद में सोचती ही रह जाओगी कि एक पागल चाहने वाला था, जिसकी आखिरी इच्छा तुम पूरी न कर पाई ....'।
डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.२६।

३ - वही - पृ.क्र.३४।

४ - वही - पृ.क्र.३५।

५ - वही - पृ.क्र.३५।

स्त्री-पुरूषों से पूछती है कि ' स्त्री-पुरूषों के साथ रहने पर हमारा समाज जो हमेशा आँखें तरेरता और उँगली उठाता है, उसमें समाज के विकृत, पुराने, दकियानूसी गन्दे मन के ही दर्शन होते हैं। उसके लिए स्त्री-पुरूष क्यों डरें ?'[१] समाज को यदि विवाह-संस्था, परिवार - व्यवस्था, टूटने का डर है, तो वह ऐसे - वैसे तो टूटकर ही रहेगी। आज यह भी कोई व्यवस्था है कि एक कमा कर लाता है और अन्य सब उस पर अवलंबित रहते हैं। तारा समाज व्यवस्था में आमूल परिवर्तन की कामना करती है।

तारा को सस्ती कविताओं से बडी खीज है। इसीलिए वह ' ओ प्रीतम तुम अँधेरे में आओ। ओ तारा तुम बुझ जाओ... '[२] आदि कविताओं के संबंध में नारी से कहती है, कि ' हे नारी। तीन हजार बरस से तू अँधेरे में रही, दीप-शिखा की तरह जलती रही। श्रृंखला की कड़ियों में बंधी रही। अभी भी तेरी इच्छा-बाकी है कि तू अँधेरे में ही रहना चाहती है।'[३] तारा सदियों से अन्याय सहते आयी नारी को उससे उबरने की चेतना देती है।

तारा अपने जीवन नाटक की ओर देखकर इस बात पर विचार करती है, कि उसका जीवन-नाटक कहाँ से कहाँ आ गया। वह कहती है कि, ' प्रत्येक तरुणी की जीवनी अपने आप में एक मजलिस है - शुरूआत किन पवित्र प्रार्थनाओं से होती है, फिर धीरे-धीरे कैसी श्रृंगारभरी ठुमरियाँ और ख्याल उसमें लहराते है .... और इस

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र. ३४

२ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.५४।

३ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा पृ.क्र.५४।

सारे राग-रंजित स्वर-वितान का अंत कहाँ होता है -- वही भैरव और भैरवी के विरागमय,अनासक्त स्वर ` जोगी मत जा, मत जा, मत जा ... पैयाँ पड़ूँ तोरी चेरी हो ....` [१]

भारतीय नारी के जीवन के संबंध में तारा सोचती है,` भारतीय नारी की जीवन की सार्थकता अंत तक किसी जोगी के अंग पर मलने की भस्मी होने में ही है क्या ? क्या वह रजकण है निरी धूल की ढेरी,कि जो चाहे आवे उसे पैरों तले रौंदे और ठुकराता चले। या वह धरित्री है वह मृत्तिका जिसमें से लाख-लाख शस्यांकुर फूटते हैं। जो सुजल और सुफल से भरी है। वह जिससे बंकिम मुद्रा में कवि पूछते हैं -- ` माँ, तुझे किसने कहा कि, तू अबला है ?` ... [२] वर्तमान समाज में नारी की स्थिति के संबंध में तारा के मन में द्वंन्द्व है।

तारा के विचार से प्राचीन कवियों ने नारी को जो उपमाएँ दी [३], वह सब झूठ हैं। क्योंकि इन उपमाओं के माध्यम से उन्होंने उसका दुर्बल रूप ही स्पष्ट कर दिया है, इसलिए वह कहती है कि सब कवि मक्कार हैं। नारी के विधायक और सर्जक रूप को स्पष्ट करते हुए तारा कहती है,` नहीं है नारी लता, नहीं है मोमबत्ती। वह स्वयम् अपना अस्तित्व रखती है। वह अग्नि की चिनगारी है, वह स्वाहा है।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.६७।

२ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.६७-६८।

३ ` कि वह लता है और वृक्ष के सहारे के बिना जी नहीं सकती, कि वह सरिता है जो सागर से मिले बिना सार्थक नहीं है, कि वह शमा है जिसे प्रभात तारा के उदय तक ही सिर्फ जलना है, और किसी आराध्य के पथरीले चरणों पर चुप-चाप मौम के आँसू बहाते हुए पतले आश्वासन के धागे पर अटके हुए जलते ही रहना है कि -` फक्त इस आसरे पर रात काटी शमआ ने रो कर। कि शायद सुबह तक जिंदा मेरा पखाना हो जाये....`
डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ. ६८।

वह सप्तसरिताओं की वेगवान बाढ है, वह गंगोत्री है, वह मोम है और मधु की निर्मात्री मधुमक्खी है, जो कि निरी चींटी की तरह बाहर से जमा कर के अपना घर नहीं बनाती ... वह फूलों से पराग लाती है और उसे अपने मोम से ढक कर, जमा कर मधु बना देती है।`[१]

तारा के स्वभाव में एक प्रकार का अन्तर्विरोध है। इसीलिए वह अन्तर्मुखी, एकांत-प्रिय स्वभाव की युक्ती होने के बावजूद भी उसे भीड के प्रति, मेले-ठेले के प्रति सभा-कॉंग्रेस के प्रति अपार मोह रहता है।`[२]

तारा अपने ही घर से निर्वासित होकर दुनिया में आश्रय खोजने निकल पडती है। उसका अब कोई भी आत्मीय नहीं है। इस बात का अहसास उसे अवसादपूर्ण बना देता है। इसीलिए वह अपनी सहेली को लिखे खत में लिखती है कि, ` मुझसे कोई मिलने नहीं आनेवाले हैं। मैं स्वयम् घर से हारी महामिलन को दुनिया में निकल पडी हूँ।`[३]

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.६८।

२ ` जैसे उस कोलाहल में जाकर वह अपने मन के दुख-दर्द को खो देना चाहती हो, उसे भुला देना चाहती हो। दिल के अन्दर जो स्मृति की भीड है, उससे बचने के लिए बाहर की भीड में अपना दिल अटका लेना चाहती हो।`
डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.३९।

३ - वही - पृ.क्र.४४।

तारा के मन में देश के प्रति अपार प्रेम है। अपने यौवन-काल का अमूल्य समय उसने स्वतंत्रता आन्दोलन के लिए अर्पित किया है। वह अपनी सहेली से देशप्रेम का महत्व जताते हुए कहती है,` उस बड़े प्रेम,सारे देश से प्रेम के बाद कौन-से प्रेम का अर्थ बचा रहता है। ये छोटे-छोटे महत्व सभी उसमें जा कर लय हो जाते हैं।`[१] लेकिन तारा यह भी जानती है कि देश प्रेम के साथ ही व्यक्ति व्यक्ति के बीच जो प्रेम पलता है, उसका भी अपना महत्वपूर्ण स्थान है। तारा उस प्रेम से वंचित है। वह अपने घर में भी किसी का प्रेम नहीं पा सकी। माँ जो सच्चे प्रेम का स्त्रोत होती है, बचपन में ही स्वर्ग सिधर चुकी थी। विमाता तो आर्थिक स्वार्थ से अंधी थी और पिता भी उसी की ही तरह अपने व्यवसाय की सुरक्षा चाहते थे। तारा अपने साथियों का भी निरपेक्ष प्रेम नहीं पा सकी। वे उससे अपनी काम भावनाओं की पूर्ति करना चाहते हैं, जिससे तारा क्षुब्ध हो उठती है। इसीलिए प्रेम से वंचित तारा कहती है,` पर उस सब के बाद भी समुद्र की उत्ताल तरंगों में ज्वार के समय पास बैठ कर उसकी प्रचंड पछाड और टकराहट की रागिनी सुनने पर भी, वह क्या है, जो मन को अशांत रखता है ? ..... विराट से मन नहीं भरता, मन मुग्ध जरूर होता है। .... बहुत विराट वाद्यसंकुल वृंदवादन भी सुना है -- परन्तु बारिश के बाद उस पार से आनेवाली बंशी की आकुल तान का भी कुछ अपना ही आनन्द है।`[२] तारा का कहना है कि इन दो वृत्तियों के बीच सामंजस्य न हो पाना यही दुनिया की समस्या है।

तारा एंगेल्स की एक किताब से यह जानकर` कि` शारीरिक वासना से ही सारा प्रेम उत्पन्न हुआ`[३] सोचने लगती है कि,` क्या विवाह स्त्री के जीवन के लिए

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.४३।

२ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा -पृ.क्र.४५।

३ - वही - पृ.क्र.५१।

आवश्यक है ? क्या वह उसकी मातृत्व-वृत्ति की, स्त्रीत्व की पूर्ति है ?'[१] तारा का अचेतन मन इसप्रकार विवाह की आवश्यकता पर विचार करने लगता है। तभी तारा का चेतन मन द्वंद्व के साथ कहता है कि' विवाह बन्धन है। वह विवाह नहीं करेगी, वह समाज सेवा करेगी। वह राष्ट्र के स्वतंत्र हुए बिना विवाह नहीं करेगी।'[२] लेकिन तारा के मन में विवाह करने की, आधार तथा प्रेम पाने की भी ललक है। इसप्रकार उसमें दो परस्पर विरोधी भावनाओं का अन्तर्विरोध है।

जेल से बाहर आने के बाद तारा कई जगह पर नौकरी प्राप्त करने का प्रयास करती है। पर उसे राजनितिक आन्दोलन तथा समाजवादी दल से संबंध होने के कारण निराशा ही मिलती है। बल्कि तारा इस तरह की विपरीत स्थितियों में भी अपना मनोबल एवं आत्मबल नहीं खोती। आत्मविश्वास से हीन लोगों में ऐसे अवसर पर आत्मघात की प्रवृत्ति जगती है। लेकिन' तारा उतनी कोमल और भावुक नहीं थी, उसका मन स्वस्थ विचारों से भरा था। वह संघर्ष और जीवन में विश्वास करती थी।'[३]

तारा के मन में स्त्री-जाति के प्रति स्वाभाविक अहंकार है। इसीलिए जब उसके दल के साथी किसी युक्ती के संबंध में खुल कर चर्चा करते हैं, तब वे बातें तारा नहीं सह पाती।

भारत में नारी की स्थिति स्पष्ट करते हुए तारा कहती है कि,' भारत में स्त्री भोग्या है, जिसपर पुरूष का एकाधिकार है।'[४] इसप्रकार स्त्री को एक उपभोग की चीज मानने पर तथा उसपर अधिकार जमाने के बाद यह सवाल ही नहीं उठता कि उससे प्रेम हो। उससे सिर्फ आनन्द उठाना यही उद्देश्य रहता है। अर्थात् वह एक खेल की चीज है, जिसे जब चाहे उठा दिया और इस्तमाल किया। प्रेम का स्वांग भी अपनी कलाई खोल देता है और अन्तत: दिखाई देती है, विद्रूप भोगलिप्सा।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.५१।
२ - वही - पृ.क्र. ।
३ - वही - पृ.क्र.५६-५७।
४ - वही - पृ.क्र.४६।

` जैसे हरियाली के नीचे साँप दुबका हो, वैसे पुरुषों का तथाकथित प्रेम जहरीली भोग लिप्सा मात्र है।`[१] तारा के इस वक्तव्य से स्पष्ट है कि, उसने अपने अनुभव क्षेत्र से पुरुष वृत्ति की असलियत को ठीक तरह से जान चुकी है। इसीलिए वह इस तरह भयानक पुरुष-द्वेषिनी बनती जाती है।

जेल से छूटने के बाद तारा का मन विक्षिप्त तीव्रता के साथ सहारे की मांग करता है। बहुत-सी परिस्थितियों में उसने अपने मन को बहुत दृढ और कसा हुआ रखा था। लेकिन अब वह सँभाले नहीं संभलता। अत: तारा गायक दीमेन्द्र के साथ विवाह करती है। विवाहोपरान्त वह दो बच्चों की माँ भी बन जाती है। लेकिन तभी दीमेन्द्र घर में आर्थिक अभाव महसूस करके शराब पीने लगा। उर्वशी नामक सिने कलाकार के मोहजाल में वह फँस जाता है। ` तारा के मन में बार बार यह सवाल उठता कि उसने विवाह करके बहुत बडा पाप किया है। उसे अपनी दार्णिक भावुकता पर पश्चाताप होता।`[२] वह सोचती है कि, `जयन्त पर उसे कितना विश्वास था, उसने उस पर सन्देह किया, उसे भुला दिया .... अब जिस दीमेन्द्र को वह कला,एकनिष्ठा और पतिव्रता की मूर्ति मानती थी - वह भी आखिर पुरुष निकला, चंचल,अस्थिर-चित्त,भ्रमर - वृत्ति का, मात्र पुरुष।....`[३] तारा के साथ दीमेन्द्र का रिश्ता भी आर्थिक आधार पर ही स्थिर था। इसलिए घर में आर्थिक तंगी महसूस होने पर दीमेन्द्र उससे तलाक लेता है। तारा को जयन्त का वह कथन बहुत ही ठीक महसूस होता है कि` आदमी और आदमी के बीच के रिश्ते आर्थिक ही हैं और वे इस युग में अधिकाधिक आर्थिक होते जा रहे हैं।`[४]

पति के इस प्रकार के रूखे आचरण एवं व्यवहार से तारा टूट जाती है। उसने जिस जिस पर विश्वास रखा था, वह विश्वास टूट जाता है। तारा अन्तत: दीमेन्द्र से विवाह करके, जिस तिनके का सहारा लिया था वह भी डूबते का सहारा नहीं बना।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.४६।
२ - वही - पृ.क्र.७१।
३ - वही - पृ.क्र.७१।
४ - वही - पृ.क्र.७४।

निष्कर्ष --

तारा के सामने समाजवाद के आदर्श हैं। समाजवाद चाहता है कि स्त्री-पुरुष समान अधिकार एवं कर्तव्यों वाले हों। तारा के सामने एक सवाल बार-बार उभरता है कि यदि पुरुष अकेले रह सकते हैं तो नारी क्यों नहीं रह सकती ? वह समाज में जहाँ भी देखती है, उसे पुरुष जाति की स्त्रियों की ओर देखने की `शिकार` की-सी दृष्टि नजर आती है। इसीलिए वह स्वयं कहती है, कि `मैं भयानक पुरुष द्वेषिनी बनती जा रही हूँ।`[१]

तारा समाज-व्यवस्था में बदलाव के साथ ही परिवार व्यवस्था में भी आमूल परिवर्तन चाहती है।स्त्री किसी भी दृष्टि से पुरुष पर आश्रित रहे, यह तारा को मंजूर नहीं है। लेकिन वह स्वयं आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र नहीं हो पाती और वह शारीरिक, आर्थिक और मानसिक आधार की जरूरत महसूस करती है। इसीलिए वह दीपेन्द्र से विवाह करती है। लेकिन तभी वह यह जान जाती है कि,` आदमी और आदमी के बीच के रिश्ते आर्थिक हैं और अर्थ ही जीवन का अर्थ रह गया है।` तारा अपने आदर्श विचारों की पूर्ति कहीं नहीं पाती। आदर्श और यथार्थ का फासला उसे मानसिक रूप से दुर्बल कर डालता है।

तारा अपने जीवन के डोर अपने हाथ लेने के लिए छटपटा रही है। वह समाज की जर्जर एवं अप्रासंगिक रूढियों को तोडने और अपने पैरों के नीचे दृढ जमीन तलाशने की छटपटाहट करती है, फिर उसमें उसे चाहे असफलता भी क्यों न मिले।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - एकतारा - पृ.क्र.४६।

` दर्द के पैबन्द ` की नायिका ऋता `

ऋता ` दर्द के पैबन्द ` उपन्यास के प्रथम खंड की नायिका है। वह अपनी कहानी आत्मकथात्मक शैली में कहती है, जिससे विभिन्न सुखदुखमय प्रसंगों में से उसके चरित्र के विविध पहलू उद्घाटित होते हैं। उपन्यास में उसका चारीत्रिक विकास - पुत्री, कॉलेज युवती, शिष्या, प्रेमिका, पत्नी, पुत्रवत्सल माता और अन्ततः पुत्रविरह से जीवन में शून्यता महसूस करनेवाली माता आदि रूपों के माध्यम से होता है।

नाम के अनुसार ही ऋता सत्यवचनी है। उपन्यास में उसका जीवन एक दर्दभरी कहानी बनकर रह गया है।

ऋता साँवले वर्ण एवं मँझले कद की लड़की होते हुए भी उसका रूप अपने आपमें आकर्षक है। बाल काले और लम्बे हैं। वह साड़ी पहना करती है।

ऋता पहाड़ी ब्राह्मण और उँचे खान-दान की लड़की है। उसके माँ-बाप खेती-बाड़ी सब छोड़कर उत्तर प्रदेश के छोटे-से शहर में रहने के लिए आए थे। पिता शराबी था और ऊपर से उसे नियमित रूप से काम करने की आदत नहीं थी। इसलिए पैसों का अभाव पग-पग पर महसूस होता रहा। माँ हमेशा बीमार रहती थी। और तीन छोटी बहनों एवं भाई की देखभाल ऋता को ही करनी पड़ती। ऋता कहती है, ` नीम-पागल माँ, जानवर की तरह खाने, चीखने और मार-पीट करनेवाला बाप। और अपने से तीन छोटे बच्चों की बराबर सँभाल।`[१] इस तरह के वातावरण में ऋता का बचपन बीतता है। घर में माँ के सिवा अन्य किसीसे ऋता को प्रेम नहीं मिलता। पिता शराबी, गालीखोर और मार-पीट करनेवाला था, अतः पिता के प्रेम से ऋता वंचित ही रह जाती है।

घर में अज्ञानी लोग और माँ पुराने ख्यालातों की होने के कारण ऋता की पढ़ाई में घरवालों से अवरोध होता था। माँ तो कहा करती, ` लड़कियों को पढ़ - लिखकर क्या करना है ? मेम बनना है ? पड़ोस की सरोज को देखो - क्या फजीहत हुई। न नौकरी मिली, न शादी हुई .... अंगरेजी गिट-पिट क्या बोलने लगी -

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.१५।

अपने आपको मलका विक्टोरिया समझाती है।'[१] इस तरह की जल-कटी बातें और उपरसे घर का गिरता आर्थिक ढाँचा , लेकिन इतना सहते हुए भी ऋता अपना धैर्य एवं मनोबल बराबर बनाए रखती है। उंची शिक्षा प्राप्त करती है। पढाई में वह होशियार है। स्कॉलरशिप के सहारे वह अपनी पढाई जारी रखती है। इसके लिए बहुत दुख भी वह सहती है। बचपन की पढाई के बारे में कहती है' बचपन की पढाई की कहानी एक लम्बी दुखगाथा है। उसके लिए कहाँ - कहाँ से क्या जुगाड नहीं करने पडे ? पुरानी, कबाड्यिों की दुकानों से खरीदी हुई किताबें, फीस के पैसे के लिए माँ के गहने गिरवी रखना ... पढाई में तेज होने की वजह से मिले हुए वजीफे[२]।' इन प्रतिकुल परिस्थितियों का सामना करते हुए ऋता एम.ए.तक की पढाई पूरी करती है। अनुसन्धान कार्य में भी उसकी रुचि है इसीलिए वह शोध-सामग्री प्राप्त करने के लिए गौहाटी की यात्रा भी करती है।

ऋता पहाडी भूमि की पुत्री है। बसुबन्धु उसके सम्बन्ध में कहते हैं कि पहाडी लडकी होने के नाते उसका हिमालय की भूमि से अतिरिक्त प्रेम है। हिन्दू संस्कारों के परिणामवश बचपन ही से शिव और देवी पूजने के संस्कार हैं।इसीलिए जब वह अपनी युवावस्था में वसुबन्धु के साथ पहाड यात्रा के लिए जाति है , तो वह पर्वतराज हिमालय के दर्शन से अभिभूत होकर उसे' स्थितप्रज्ञ महायोगी पंच-महाभूतनाथ'[३] की उपमा देती है। वसुबन्धु ऋता के इस सहज विश्वासी स्वभाव को देखकर उसे ' स्वप्निल आँखों' वाली एवं ' कल्पना विलासी' कहते हैं।

ऋता संस्कृत की पढाई में कमजोर थी और इसी बहाने उसकी भेंट वसुबन्धु से होती है। अपने जीवन में वसुबन्धु का स्थान स्पष्ट करते हुए ऋता कहती है,' इन्हीं दिनों मेरा सम्बन्ध एक ऐसे व्यक्ति के साथ आया, जिसका बहुत बडा एहसान - या कहूँ कि एक तरह से सूत्र-संचालन ही मेरी जिन्दगी के इस कठपुतली के खेल में रहा है।'[४] वसुबन्धु ऋता को संस्कृत पढाते समय बहुत ही' स्नेहभरी शैली ' में बडी कठीन बात सहज ही में समझा देते थे। इसीलिए ऋता वसुबन्धु से बर्ताव करते समय दूरी महसूस

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.१५।
२ - वही - पृ.क्र.१७।
३ - वही - पृ.क्र.४१।
४ - वही - पृ.क्र.२३-२४।

नहीं करती, वह कहती है` पता नहीं कैसे उतने बडे आदमी और मेरे बीच में एक स्नेह का अदृश्य, अनजाना तंतु पहले खिंच आया, और धीरे-धीरे वह एक ऐसा पक्का सेतु बन गया जिसने इस पहाडी निर्झरिणी के मन के दोनों किनारों को बाँध दिया ।`[१]

ऋता, विद्रोही स्वभाव की युक्ती है । वह स्वयं इन शब्दों में अपने इस स्वभाव-वैशिष्ट्य का वर्णन करती है,` बचपन से ही मैं स्वभाव से कुछ विद्रोही थी ।`[२] ऋता के इस मूलत: विद्रोही स्वभाव और बागी विचारों को वसुबन्धु के साहचर्य से एक दृढ भूमिका मिलती रही ।

विद्रोही प्रवृत्ति के कारण ही ऋता कॉलेज में हो रहे अन्याय, अत्याचार के खिलाफ लडने के लिए तैयार हो जाती है और छात्र-यूनियन नेता रमेश का सुझाव स्वीकार कर विद्यार्थियों की ओर से छात्र यूनियन की प्रतिनिधि बन जाती है । ऋता की सहेली उसके इस राजनैतिक कार्य के खिलाफ है, क्योंकि उसे डर है कि इसतरह ऋता के राजनैतिक गतिविधियों में शामिल होने से उसका नजीफा बन्द हो जाएगा । लेकिन ऋता डरपोक नहीं है और इस कार्य के परिणामों का भी विचार नहीं करती इसलिए वह इस कार्य में पीछे नहीं हटती ।

अपने पहाडी देहात में ऋता जब जाती है,तो वहाँ वह पाती है कि गरिबों, स्त्रियों आदि पर दीर्घकाल से चलते आ रहे अत्याचार अब भी उसी पैमाने पर चल रहे हैं, सिर्फ तरीके बदल चुके हैं । पहाडी लडकियों पर उसी तरह लोगों की वासना दृष्टि है । ` पहाडी लडकियों की आम बिक्री, खरीद-फरोख्त,नेपाल की सीमा से कलकत्ता बम्बई के चकलाखानों तक और वहाँ से पता नहीं किन-किन देशों के गुलाम-बाजारों तक उसी तरह चल रही है । नाम बदल गए हैं, पर उनकी मूल क्रूरता तो किसी कदर कम नहीं हुई है ।`[३] पुरुष की नारी जाति के प्रति इस तरह की वासना दृष्टि का कारण खोजते हुए ऋता कहती है,` क्या सारी हिंसा का मूल यह हबिस है ? पुरुष की स्त्री के प्रति यह ..... शिकार जैसी दृष्टि ? वह फिर बढकर दूसरों की भूमि,दूसरों

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.२६ ।

२ - वही - पृ.क्र.३० ।

३ - वही - पृ.क्र.२१ ।

की लक्ष्मी, दूसरों की पत्नी हड़पने की जिज्ञासा तक पहुँच जाती है ? [१] ऋता सोचती है कि इस दुष्प्रवृत्ति की जड शायद अपने सुख के लिए दूसरे का ` उपयोग` करने की प्रवृत्ति होगी ।

ऋता डरपोक और समाजभीरु लड़की नहीं है । उसमें स्वतंत्र बुद्धि के साथ किसी बात का निर्णय लेने की क्षमता है । किसी चीज को कोई बुजुर्ग कह रहा है इसलिए वह नहीं मानती, बल्कि वह पग - पग पर क्यों, किसलिए, किस कारण से आदि शंकाओं को लेकर चलती । ` [२] उसका उन्नीस बरस की उम्र में वसुबन्धु के यहाँ हमेशा आना जाना लोगों की नजरों में अखरता है क्योंकि वह घर में अकेला युवक होने के साथ बेकार भी था । इसलिए ऋता की माँ उसे इस संबंध में सजग करने की कोशिश करती है, लेकिन ऋता उसे डाँटकर कह देती है, ` मैं अपना बुरा-भला अच्छी तरह समझती हूँ । मैं सयानी हो गयी हूँ । ` [३]

ऋता की निर्णय क्षमता और एक प्रसंग में बड़ी तीव्रता से दिखाई देती है । रोबर्तो से जब उसके मन में प्रेम उत्पन्न होता है तब यह जानते हुए भी कि वह विदेशी है और पहले ही से विवाहित है, ऋता उससे विवाह करने का साहसपूर्ण निर्णय लेती है । अन्य लोग उसके विदेशी होने की वजह से इस विवाह की सफलता पर साशंक हैं ।

नशे में चूर होनेवाले हिप्पी लोगों के संबंध में ऋता कहती है कि यह एक तरह से संसार से भागने का ही तरीका है । और यह हाल न सिर्फ पश्चिम के भिक्षुओं का है बल्कि अपने देश के बहुत से साधु संन्यासी भी उसी तरह दुहरा जीवन जी रहे हैं । ऋता को जीवन की कठिनाइयों से भागकर पलायनवादी मार्ग अपनाना पसंद नहीं है, इसलिए उसने अपना लक्ष्य निर्धारित किया है, कि ` जब तक साँस है, तब तक संघर्ष है । ` [४] आगे वह कहती है, कि ` इसीलिए मैं आज भी इतनी विपरीत

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.२१ ।

२ - वही - पृ.क्र.३० ।

३ - वही - पृ.क्र.३१ ।

४ - वही - पृ.क्र.२२ ।

परिस्थितियों के बावजूद जूझ रही हूँ।[१]

`करनी और कथनी` में बेमेल रखने की मनोवृत्ति ऋता को बिलकुल पसंद नहीं है। इसलिए वह अपने विवाह समारोह के अवसर पर उसके पति, रोबर्तो द्वारा ली गई प्रतिज्ञा` नाति चरामि` की आलोचना कर उसका खोखलापन स्पष्ट कर देती है। वह कहती है` क्या इन संस्कृत मंत्रों का कोई अर्थ होता है ? `[२] संस्कार प्रवण समाज सुसंस्कृत कहलाने का दावा करता है और अपनी संस्कृत को वह` देववाणी ` बनाकर उसे अपने से दूर गर्भगृह में बैठा देता है। असंस्कृत मंत्रों का ही अर्थ होता है, जिनसे भूत प्रेतों को उतार दिया जाता है। ऋता इस तरह की बातें कहने के लिए इसलिए मजबूर हो जाती है, कि रोबर्तो जैसे सुसंस्कृत गृहस्थ वैवाहिक जीवन की मर्यादा ओं के विधिवत् पालन की प्रतिज्ञा लेते हैं, लेकिन प्रत्यक्ष जीवन में उन मर्यादाओं को तोड़कर उसके खिलाफ अपना आचरण रखते हैं। फिर कौनसा अर्थ रह जाता है इन संस्कृत मंत्रों का और अन्तत: संस्कृति का ?

ऋता अपने महाविद्यालयीन जीवन में रमेश नामक छात्र-यूनियन के नेता से बड़ा धोखा खा जाती है। रमेश के साथ यूनियन का काम करते वक्त किसी भावुक क्षण में ऋता उसे अपना जीवन सर्वस्व,स्वामी मान बैठती है। घर में प्यार से वंचित ऋता कहती है ,` एक अजीब अनुभूत अभिपूर्ति मैंने अनुभव की,जिस पर बाद में भी मुझे कभी पश्चाताप नहीं हुआ। मुझे जीवन में सिवा मेरी माँ के किसने प्यार दिया था[3]? वसुबन्धु ने उसे वत्सलता दिखाई थी लेकिन वह अशरीरी और बौद्धिक सहानुभूति के स्तर पर था। इसलिए ऋता अपने काम भावनाओं की पूर्ति करके रमेश का प्रेम प्राप्त करने का असफल प्रयास करती है। लेकिन अन्तत: वह महसूस करती है कि, उन कामांध क्षणों में जन्म-जन्म तक साथ बँधने,रहने,मरने के वादे कोरे शब्द थे। वह अपना आक्रोश प्रकट करते हुए कहती है,` रमेश और शायद सारे पुरुष- स्त्री को

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.२२।

२ - वही - पृ.क्र.७४।

३ - वही - पृ.क्र.३७।

युगों-युगों से इसी तरह के वादे देते रहे हैं। वे एक क्षण में अनन्तता का आभास देने की क्षमता रखते हैं। और बाद में बडी आसानी से कहीं शापित दुष्यन्त की तरह विस्मृति घेर लेती है, कहीं दमयंती की आधी साडी लपेट कर नल की तरह वे भाग निकलते हैं। कहीं वह अपनी ही वासना का आरोप बेचारी स्त्री के माथे डाल कर पुरुरवा की तरह उर्वशी के नाम से हाय हाय करते रहे ,और कहीं वे 'गंधर्व-कन्या चित्रांगदा की इच्छा थी, मैं क्या करता ?' कह कर अर्जुन की तरह जिम्मेदारी से बचते रहते हैं। .... यह पुरुष प्रकृति का उद्दाम शारीर-भाष्य है। उसीने शास्त्र लिखे, नीतियाँ बनाईं। और नारी को इस तरह कोसा है कि जैसे वही सब अन्याय की जड हो।'[१] इसतरह रमेश क्षणिक क्षण में ऋता की विवशता का फायदा उठाते हुए अपनी कामनापूर्ति कर लेता है। ऋता को ऐसे पुरुषों से बहुत चीड है, जो नारी देह को अपनी वासना पूर्ति का साधन बनाते हैं।

ऋता अपने घर की गिरती आर्थिक दशा को सुधारने के हेतु डॉक्टर रोबर्तो नामक एक विदेशी (इटालियन) विद्वान को हिन्दी पढाने का काम स्वीकार कर लेती है। पढने पढाने के दौर में दोनों एक दूसरे की ओर आकृष्ट होते हैं। चाँदनी रात में कोणार्क के मिथुन शिल्प देखते देखते ऋता अपना सर्वस्व दान रोबर्तो को दे बैठती है और दोनों विवाह सूत्र में बँध जाते हैं। लेकिन तीन ही साल के उपरान्त उसका वह विदेशी पति उसके दो वर्षीय पुत्र को लेकर, ऋता को बिना कुछ सूचना दिए, विदेश भाग जाता है। पति पर से उसका विश्वास ही उड जाता है। और इसप्रकार पुत्र और पति को खोकर उसका जीवन शून्यवत् हो जाता है। जीवन में भारी खालीपन महसूस करते हुए वह कहती है, 'महादेव को खोकर मैं अब उस खँडहर उमा मन्दिर की तरह हो गई थी, जिसमें से देवता कूच कर गए हैं। जो केवल खोखला पडा है, प्राण उसमें की प्रतिष्ठा खो चुके हैं।'[२] किसी भी स्त्री और खासकर भारतीय स्त्री के जीवन में उसके पति का स्थान किस तरह महत्वपूर्ण है, ऋता के उपरोक्त कथन से स्पष्ट होता है।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.३७-३८।

२ - वही - पृ.क्र.८८।

रॉबर्तो ऋता को अनन्त यातनाएँ, पीडा देकर, उसे अकेला छोड कर गया। ऋता की जिन्दगी ' दर्द के पैबन्द' बन गयी। अपने जीवन में बीती घटनाओं पर सोचते हुए एक प्रश्न उसे कचोटता है कि,' क्या स्त्री को किसी भी पुरुष पर, उसके प्रेम प्रदर्शन पर कभी भी विश्वास ही नहीं करना चाहिए ? क्या प्रकृति का यह परस्पर-आकर्षण का विधान, यह चाह और आकर्षण और आसक्ति मूलत: गलत है ? [१] ऋता अपने जीवन में इस तरह पुरुषों से दो बार धोखा खाती है और इसलिए उसे महसूस होता है कि जीवन ' तीखा, तेजाब की तरह तल्ख तजुरबा है। आग का दरिया है।'[२] अपने जीवन में बीते कटु प्रसंगों के कारण वह सोचती है कि क्या स्वाभाविक प्रेरणाएँ गलत है ? लेकिन यह स्पष्ट ही है कि, प्रकृति का यह परस्पर आकर्षण स्वाभाविक ही है लेकिन उन्हें उचित दिशा देना मनुष्य ही के हाथ में है।

ऋता स्वाभीमानी स्त्री है। इसलिए एक बार अपने पति से ठुकराए जाने पर रॉबर्तो के साथ फिर से बसने या उनके दिल को जीतने या हृदयपरिवर्तन करने का विचार भी मन में नहीं लाती। वह कहती है कि,' उनके साथ अब मेरा जीवन में कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता था। मैं यह मानकर चल रही हूँ कि मेरा नारीत्व मातृत्व तक पहुँचा। परन्तु शायद मेरे भाग्य में पत्नीत्व लिखा ही नहीं था। अब यह मातृत्व आजीवन टिका रहे।'[३] अतएव वह पुत्र की खोज में इटली चली जाती है। वह उसके जीवन के मरुस्थल में आनन्द का एकमात्र स्त्रोत है। ऋता के शब्दों में कहा जाए तो, ' वही मेरे भटके हुए जीवन की एकमात्र सार्थकता, एकमात्र दिशादर्शक ' आनन्द' है।'[४]

वसुबन्धु ऋता से उसके बच्चे की नागरिकता के संबंध में सवाल करने पर ऋता जवाब देती है कि' जहाँ का वह निवासी बनना चाहे। हम क्यों उस पर अपनी इच्छा थोपें ?'[५] लेकिन इस तरह की स्थिति कब संभव है ?' जब विश्व में एक राज्य, एक

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.८७।
२ - वही - पृ.क्र.९०-९१।
३ - वही - पृ.क्र.८५।
४ - वही - पृ.क्र.८५।
५ - वही - पृ.क्र.८२।

कानून हो जाये, तब संभव है, ऐसी आदर्श स्थिति आ सके ।'[१] कृता आदर्शों के सहारे चलनेवाली, भावुक, एवं कल्पना-विलासी स्त्री है। इसलिए वह इस तरह सोचती है। लेकिन वस्तुत: धर्म,जाति,नागरिकता,व्यक्ति का नाम और अस्मिता ऐसी चीजें है, जो व्यक्ति अपनी इच्छा के अनुसार चुन नहीं सकता ।

कृता इटैली जाने के बाद दोनों देशों (भारत - इटैली) के सांस्कृतिक अवमूल्यन पर सोचते हुए कहती है कि, सभ्यता और संस्कृति का सबसे प्राचीन इतिहास अपने में संजोनेवाले ये देश आज कौनसी स्थिति में हैं ? संसार को सभ्यता का पाठ पढानेवाले इन देशों की हालत आज कैसी है ? इटैली पर विचार करते हुए कृता कहती है,' अब क्या है वहाँ ? वहाँ अब सीजर नहीं दहाडते, न टूर्नामेन्ट होते हैं, न श्वेत अश्वों से जुते रथों की दौड होती है, न रोम के साम्राज्य का वैभव क्लिओपात्रा की ऊँची नाक पर माखी भी न बैठने देनेवाला गर्व और दर्प लिए सीना फुलाए चलता है। अब वहाँ भी मोराविया की चुचाती सडकों पर सिन्यौर सिन्यौर करती हुई पीछे-पीछे,दिन दहाडे किसी भी दुष्कर्म का सौदा करने अल्प वस्त्रों में इठलाती है।'[२] कृता को रीटा का यह कथन सही महसूस होता है कि, इन दोनों देशों का (इंडिया और इटैली) भूतकाल एक-सा ही भव्य-दिव्य है। साथ ही गरीबी,धर्मप्रवणता और अंधविश्वास के मामले में भी उतनी ही समानता है।

जीवन की भटकन के बाद अन्तत: कृता के हाथ निराशा ही आ जाती है। उसे महसूस होता है कि ' जीवन में आनन्द की खोज कितनी कठिन है।'[३] अपने अपने जीवन की अर्थशून्यता स्पष्ट करते हुए कृता कहती है' मेरी हालत उस पहाडी झरने की तरह थी, जो कभी,कहीं,अज्ञात किसी पर्वतीय क्रोड में जन्मा,बाद में उछलता कूदता,पत्थरों से - कगारों से, चट्टानों से टकराता हुआ, पता नहीं कहाँ पहुँचा - राह में उसका संगम भी किसी जलाशय से हुआ, पर वाणिज्य ऐसे निर्झर को कौन पूछता है ?[४]

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.८३ ।
२ - वही - पृ.क्र.१४ ।
३ - वही - पृ.क्र.८९ ।
४ - वही - पृ.क्र.८८ ।

ऋता अपने जीवन में व्यक्तिगत आकांक्षाएँ कम रखते हुए भी जीवन में पूरी तरह संतोष नहीं पाती । वह अन्तत: ` अपने देश से, परिवार से, उखड़ी बिछुड़ी, एक चिर-निर्वासिता, एक शरणार्थिनी `[१] बनकर रह जाती है ।

निष्कर्ष --

ऋता एक विदेशी के साथ विवाह करती है । इस तरह वह पाश्चात्य संस्कृति को अपनाती है, लेकिन वह अपने पूर्व संस्कारों से पूर्णत: छुटकारा नहीं पाती । इसीलिए उसका जीवन ` दर्द के पैबन्द ` बन जाता है । लेखक इस चरित्र के माध्यम से यह स्पष्ट करना चाहता है कि, ` हम संस्कार से कटी हुई संस्कृति बनाने जा रहे हैं । अधर में त्रिशंकुवत् । न पुरानी, न नयी रूढ़ियों से मुक्त । एक आधार हीन सेतु, एक उध्वमूल वृक्ष । `[२] ऋता की हालत इसी प्रकार त्रिशंकुवत् बन जाती है । वह अन्तत: न घर की न घाट की ।

` दर्द के पैबन्द ` की नायिका - रीटा --

उपन्यास के दूसरे खंड की नायिका रीटा एक विदेशी युवती है । उसे भारत की प्राचीन संस्कृति, स्थापत्य, कला, शिल्प, दर्शन से आकर्षण है । इस देश के बारे में बहुत कुछ जानने की जिज्ञासा भी उसके मन में है । इसीलिए वह बड़ी बड़ी आशाएँ लेकर भारत आई है । उसके मन में यह कुतूहल है कि, क्या हिन्दुस्तान वह नहीं है, जो किताबों में बन्द है, ` या सात समुंदर पार के साहबों ने अपने आदर्शों के अनुरूप पाने की कोशिश की । या वह भी हिन्दुस्तान है, जो भूख से बिलबिला रहा है, जो गन्दी झुग्गी-झोपड़ियों में अधनंगी स्त्रियों की बाँस के टट्टर की अधमुँदी दरवाजों से झाँकती आँखों में है । `[३] यहाँ के लोगों के बारे में रीटा सोचती है कि

---

१ डॉ. प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.९७ ।
२ -वही- पृ.क्र.१६२
३ - वही- पृ.क्र.१३-१४ ।

वे गोरे, निर्दय, ढोंगी लोगों से अच्छे होंगे। `देवता या फरिश्ते नहीं तो कम से कम अधिक मानवीय होंगे।`[१] लेकिन अन्ततः रीटा के हाथ निराशा ही लग जाती है।

रीटा मूलतः आस्ट्रेलिया निवासी गोरे माँ-बाप की सन्तान है, जो उसके बचपन में ही परलोक सिधर चुके हैं। माँ-बाप के पीछे इस अनाथ लड़की को उसके चाचा के सिवा अन्य कोई सम्बन्धी नहीं था। उसी चाचा ने उसे पाल-पोसकर बड़ा किया।

रीटा आस्ट्रेलियन गोरे माँ-बाप की सन्तान होने के कारण वर्ण से गोरी है। कृता उसका वर्णन इन शब्दों में करती है` रीटा ऊँची-पुरी, गोरी-चिट्टी, सुनहले बालों की, नीली काली आँखों की, स्कर्ट पहने।`[२] भारत में आ जाने के बाद रीटा भारतीय संस्कृति के अनुसार साड़ी पहना करती है। भारत आनेपर उसकी भेंट कृता से हो जाती है। उसे तब महसूस होता है कि उन दोनों में नाम-साम्य के अतिरिक्त अन्य किसी मामले में समानता नहीं है।

बचपन से ही रीटा कुतूहलवश अपने पादरी चाचा से आदिवासियों के सम्बन्ध में सवाल करती थी। लेकिन उसकी जिज्ञासा का समाधान मिलने के बजाय उसे चाचा की डाँट सुननी पड़ती थी। परिणामवश उसके स्वभाव में विद्रोही वृत्ति पनपती है। और आदिवासियों के प्रति उसके मन में एक गुप्त प्रकार का भय-मिश्रित आकर्षण पैदा हो जाता है। आदिवासियों की कुत्तों से भी बदतर जिन्दगी रीटा देख चुकी है। अतः वह उनके कठिन हालातों से परिचित है। बचपन से ही उसे यह समस्या सताती है कि क्या ये इन्सान नहीं है, जो इतनी बदतर जिन्दगी जीते हैं ? इस तरह रीटा के मन में गरीबों, दीन-दुखितों, पीड़ितों के प्रति सहानुभूति निर्माण होती है। इन्हीं लोगों की सहायता के लिए वह भारत में आकर अपना जीवन समर्पित करती है।

विद्रोही स्वभाव के कारण रीटा चाचा के धर्म-प्रेम के विरोध में दूसरे अनेक धर्मों के बारे में पढ़ती रही। इसीसे उसके मन में पूर्व देशों के धर्मों के बारे में अध्ययन

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.१०२।

२ - वही - पृ.क्र.१३।

करने की लालसा पैदा होती है।

रीटा के घर का वातावरण बेहद ठंडा, नीरस एवं कुंठित करनेवाला था। इसी वजह से बचपन से ही उसके मन में घुमक्कडी के प्रति आकर्षण पैदा हुआ। कॉलेज जाकर रीटा इसी आशा से नर्सिंग की ट्रेनिंग लेती है कि, दूर किसी मिशन में उसकी नियुक्ति होकर घर के अप्रिय, अरुचिकर वातावरण से छुटटी मिले।

चाचा ने रीटा का विवाह तै किया था। लेकिन विवाह के पूर्व ही नियोजित पति की अपमृत्यु हो जाती है, तभी वह अविवाहित रहकर गरिबों, दुखियों पीडितों की सेवा करने का निश्चय कर लेती है।

रीटा जिज्ञासु स्वभाव की युवती है। अतएव वह रविन्द्रनाथ,गांधीजी और अरविन्द आदि भारत के तीन महामनिषियों की लीलाभूमियों में भटकती है। साथ ही वह शान्तिनिकेतन के पास संथालों की बस्ती में, सेवाग्राम के पास स्थित महारों की बस्ती तथा अरविन्दाश्रम के निकट गरिब तमिष आदिवासियों की बस्ती में घूमती है। उसे इस बात की जिज्ञासा है कि, इन महापुरुषों ने क्रमश: शान्तिनिकेतन,सेवाग्राम और अरविन्दाश्रम आदि संस्थाओं की स्थापना की और लोगों के सामने आदर्श रखे। इनके आदर्शों का सामान्य लोकजीवन पर कहाँ तक असर पडा है यह उसके अध्ययन का प्रमुख विषय था। इसतरह भारतीय समाज में बदलती स्थितियों का अध्ययन उसका मुख्य लक्ष्य था। रीटा टैगोर और अरविन्द के आदर्शवाद का मूल्यांकन निकट के संथालों एवं आदिवासियों के जीवन के संदर्भ में करना चाहती है। साथ ही गांधीजी के प्रभाव की परीक्षा उनके निकट के अनुयायियों के संदर्भ में करना चाहती है।

शान्तिनिकेतन तथा उसके निकट संस्थालों की बस्ती में जाने के बाद रीटा को महसूस होता है,कि शान्तिनिकेतन की सौंदर्योपासना से संथालों का कोई सम्बन्ध नहीं है।

सेवाग्राम के आस-पास हरिजनों की बस्ती में घूमने के बाद रीटा जान जाती है कि गांधीजी के सर्वोदय और नैतिक मूल्य परिवर्तन से निकट के महारों-मांगों और हरिजनों का नाम मात्र को भी सम्बन्ध नहीं है।

भारतीय देहात बहुत आदर्श होंगे ऐसी रीटा की कल्पना थी ।' विशेषत: गांधी जैसे महात्मा के पवित्र चरण जहाँ पडे, वहाँ की जमीन तो जरूर ही बदल गई होगी '[१] ऐसी आदर्शवादी कल्पना राज- रीटा दोनों के मन में थी । लेकिन सेवाग्राम के आस-पास के देहात देखने के बाद दोनों के मन में बडी खिन्नता उत्पन्न होती है । सब ओर एक-सी समस्याएँ थीं । रीटा कहती है कि, गाँवों की इस स्थिति में सुधार लाने के लिए न सिर्फ नीति-उपदेश से काम चलेगा, बल्कि उसका भौतिक आर्थिक आधार ही बदलता होगा ।

सेवाग्राम के कार्यकर्ता से गांधीजी के सिद्धातों की लोकप्रियता कम होने का कारण पूछनेपर रीटा को जवाब मिलता है कि, कुछ अंश में यह दोष उनके अनुयायियों में था, जो उन सिद्धान्तों को प्रचलित नहीं कर पाए । लेकिन बहुत बडा दोष जनता का रहा, जिन्होंने गांधीजी को देवता बनाकर अपने से दूर प्रतिष्ठित कर दिया । और इसतरह मनुष्य से ऊपर अलौकिक बना देने से फिर हम उनका अनुयायित्व करने से बच जाते हैं ।'[२]

इस प्रकार रीटा के सामने यह बात आती है कि,' रवीन्द्रनाथ और गांधी के सौन्दर्य और शिव के प्रयोग बहुत जल्दी इतिहास की वस्तु बनते गये, बनते जा रहे हैं ।'[३] रवीन्द्रनाथ और गांधीजी की मृत्यु के बाद ढाई तीन दशकों में ही भारतीय लोग उनका महत्वपूर्ण योगदान भूलते जा रहे है ।

रीटा पांडिचेरी के अरविंद आश्रम तथा ओरोविल के निकट तमिष आदिवासी मजदूरों की बस्ती में घूमती है । लेकिन वह पाती है कि, इस उर्ध्व-संतरण की प्रक्रिया में बहुसंख्यक गरीब वर्ग और आदिवासियों के अज्ञान, निर्धनता आदि को समाप्त करने का कोई भी मार्ग नहीं दिखाई देता है । वह अपनी सहेली से कहती है,' तुम कैसे कह सकती हो कि यह मनुष्य का इतना बडा टुकडा आसपास छहराता हो, फूत्कारता हो

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.१२१ ।

२ - वही - पृ.क्र.१२५ ।

३ - वही - पृ.क्र.१४४ ।

और तुम लोग इस तरह अप्रभावित टापू की तरह निरे ध्यान-मग्न होकर उर्ध्व संतरण की ही सोचते रहो ? ... जब तक उस गरीब की झोपडी में दीया नहीं जला है, हम बिजली की चकाचौंध से दिन के अँधेरे में कृत्रिम प्रकाश करके उसके सहारे कब तक जियेंगे ?'[१] निम्न वर्ग की प्राथमिक जरूरतों की पूर्ति होनी चाहिए, यह रीटा की कामना है। इसी हेतु से रीटा अपनी सहेली से कहती है कि, जब तक आदमी को रोजी रोटी, कपडा, मकान नहीं मिलता, तब तक यह धर्म-दर्शन की चर्चाएँ स्थगित कर दी जाए, तो अच्छा ही रहेगा। यहाँ रीटा का पश्चिम का भौतिकवादी दृष्टिकोण स्पष्ट होता है। वह एकांगी दृष्टि से विचार करती है। लेकिन वह यह नहीं जानती कि,' मनुष्य न केवल शरीर है, न केवल मन।'[२] सवाल है सिर्फ प्राथमिकताओं का। वस्तुत: दोनों तरह के विकास की जरूरत है।

समाज-कार्य के सिलसिले में रीटा की भेंट स्थानीय कॉलेज के अध्यापक राज से होती है। दोनों में दृढ परिचय हो जाने के बाद राज की माताजी रीटा के सामने विवाह प्रस्ताव लाती है। तब रीटा के सामने कृता का बिखरा हुआ जीवन आकर उसके मन में प्रश्न उठता है कि,' क्या सभी दो संस्कृतियों के विवाह यों असफल होते हैं ?'[३] लेकिन कहीं अच्छे उदाहरण भी उसके सामने थे जिनके जीवन-यापन में दो अलग-अलग धर्म या जीवन-पद्धतियोंका भेद आडे नहीं आया था। इसलिए रीटा यह आशा रखती है ' अनेक वाद्यों का सुमधुर ऑर्केस्ट्रा '[४] बन सकता है।

रीटा विदेशी संस्कारों में पली हुई युवती होते हुए भी यह नहीं चाहती कि विवाह का प्रस्ताव प्रथमत: उसकी अपनी ओर से आये। उपन्यास में रीटा का यह स्वभाव-वैशिष्ट्य उभरकर आता है क्योंकि प्रतिमा एक भारतीय नारी होते हुए भी तात्कालिक प्रभाव से अभिभूत होकर वह स्वयं विवाह का प्रस्ताव वसुबन्धु के सामने रखती है। इस पार्श्वभूमि में रीटा का संयम अधिक स्पष्टता से लक्षित होता है।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.१४७।
२ - वही - पृ.क्र.१४९।
३ - वही - पृ.क्र.१०१।
४ - वही - पृ.क्र.१०९।

रीटा नन होने की वजह से उसे अविवाहित रहकर सेवा और तपस्या ही के लिए जीवन अर्पित करना बन्धनकारक था । लेकिन वह सोचती है कि ' क्या वह सेवा और तपस्या के लिए अर्पित जीवन केवल नकार पर आश्रित नहीं है ? ..... क्या मेरे सेवा कार्य में और विवाहित जीवन से कोई परस्पर विरोध था ? '[१] बल्कि वह सोचती है कि, दोनों मिलकर सेवा कार्य करने से ज्यादह जोर से काम हो सकेगा।

रीटा स्वतंत्र विचारों की, व्यक्तिवादिनी और मनस्विनी नारी है । इसीलिए विवाह से पूर्व रीटा के मन में एक महत्वपूर्ण सवाल उठाता है कि, हिन्दू घर में उसका विवाह कैसे हो सकेगा, जहाँ पारिवारिक सम्बन्धों में विशेषत: नई बहू को बडों से आगे पग-पग पर झुकना पडता है । अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता की वह पक्षधर है इसलिए सोचती है कि, ' यह क्यों जरूरी है कि विवाह के बाद या तो पति या पत्नी - एक किसी के व्यक्तित्व का पूरा विलयन या ह्रास हो जाये ? '[२] भिन्न वातावरण में बडी होने के कारण रीटा के धार्मिक संस्कार भी सर्वत: भिन्न हैं । इसलिए उसके मन को यह समस्या साल रही है कि, ' क्या विवाह का अर्थ अपने धार्मिक संस्कारों की पूरी तरह विस्मृति और नये संस्कारों के अपरिचित व्यवहार को अपनाना था ? '[३] लेकिन वह यह बात जानकर आश्वस्त हो जाती है कि राज इतना अविवेकी या अविचारी नहीं है, जो उसे पूरी स्वतंत्रता न दे ।

रीटा के कोई सन्तान नहीं है । फिर भी वह आदिवासियों के बच्चों में अपनी मातृवत्सलता बिखेरती है । राज-रीटा-दोनों में भी समान रुचि, एक-दूसरे के लिए त्याग, सहयोग, समर्पण की भावना तथा सामंजस्य होने के कारण वे अपना वैवाहिक जीवन बडी सफलता के साथ बिताते है ।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.११० ।

२ - वही - पृ.क्र.१०९ ।

३ - वही - पृ.क्र.११० ।

रीटा को भारतीय लोगों का यह व्यवहार बहुत अखरता है कि, ये लोग भूतदया, जीवदया का बडा ही महात्म्य मानते हैं, लेकिन कीचड में पडे अपने ही भाइयों के लिए कुछ ठोस काम नहीं कर पाते ।

भारतीय समाज में नारी का स्थान स्पष्ट करते हुए रीटा कहती है,' अंतत: पुरुष-प्रधान समाज में,प्रथम भी पुरुष ही है, अंतिम भी पुरुष ही । प्रश्न भी पुरुष ही है, उत्तर भी पुरुष ही है । बेचारी स्त्री तो' व्यक्त मध्य' है । एक उपमान्वयी अव्यय से अधिक उसकी हस्ती क्या है ।'[१] इसप्रकार भारतीय पुरुष-प्रधान समाज में नारी का स्थान और स्थिति बहुत ही दयनीय है , यह बात रीटा स्पष्ट करती है ।

राज की बहन,प्रतिमा के संबंध में राज और रीटा सोचते है कि, रोबर्तो ने कृता के बारे में जो किया,विदेशी न होते हुए भी वसुबन्धु ने भी प्रतिमा के साथ वही किया । इसलिए लेखक ने यह सवाल उपस्थित किया है कि,' क्या दिशा-भेद का कोई अर्थ नहीं है ? मनुष्य यहाँ,वहाँ, सब ओर एक सा ही है । उतना ही लोभी,लालची, क्रोधी,कामी,मत्सरमय,मद भरा,' जमीन', जो और जर' से चिपटा ?'[२] वस्तुत: इस समस्या का हल दिशाओं की अपेक्षा मनोवृत्ति में अधिक है ।

रीटा जिन आशाओं के साथ भारत में आयी थी उनकी पूर्ति वह कहीं भी नही पाती । भारत के विविध स्थानों मे जाने के बाद उसे महसूस होता है कि हिन्दूस्तान का यथार्थ चित्र ' सिर्फ शालभंजिका और मथुरा म्युजियम में लाल पत्थरों में उत्कीर्ण गुप्त-काल की आधे दरवाजों से झाँकती पुरंध्रियों की उत्सुक विस्मय - आँखों में ही प्रस्तर जड़ित नहीं है ।'[३] यद्यपि रीटा यह बात जानती है कि,' बहुत अधिक आशा लेकर चलने से ही निराशा हाथ आती है,'[४] फिर भी अन्तत: वह निराश हो जाती है ।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबन्द - पृ.क्र.९७ ।
२ - वही - पृ.क्र.११८ ।
३ - वही - पृ.क्र.१४ ।
४ - वही - पृ.क्र.११२ ।

भारतीय लोगों के प्रति उसकी जो आदर्श कल्पनाएँ थीं, वह केवल कोरी कल्पनाएँ ही प्रतीत होती हैं। रीटा उनके बारे में कहती है, कि 'वे भी अधनंगे, अंधविश्वासी, अशिक्षित, अत्यन्त जल्दी गुस्सा होनेवाले, अजीब लोग जान पड़े।'[१] इनमें भाषा, जात, प्रान्त, धर्म आदि बातों को लेकर हमेशा दंगे फैसाद होते हैं, ऐसा दृश्य दिखाई देता है। इन सब समस्याओं के समाधान तथा समग्र मानव-कल्याण का कोई एक सूत्र उपलब्ध न होता देखकर रीटा कहती है 'मनुष्य के लिए कोई एक रामबाण की तरह फार्मूला नहीं है कि वही सब देशों में, सब दिशाओं में, सब लोगों के लिए एक-सा कल्याणकारी हो।'[२] रीटा अपने इस वक्तव्य के माध्यम से स्पष्ट करना चाहती है कि, मनुष्य जीवन में अर्थपूर्णता लाने के लिए स्वयं उसे ही प्रयत्नरत रहना चाहिए।

निष्कर्ष --

भारत एक महान विभूतियों का देश है जिसे गौरवशाली सांस्कृतिक परम्परा है। भारतीय संस्कृति प्राचीन संस्कृति है। अत: विदेशी लोगों के मन में यह इतिहास देखकर भारत के बारे में, भारतवासियों के बारे में अलग प्रतिमा निर्माण होती है कि, यहाँ के लोग और लोगों से अच्छे होंगे, यहाँ के लोगों में अज्ञान, दारिद्र्य, रूढिगत संस्कार नहीं होंगे। लेकिन यहाँ आ जाने के बाद उन्हें महसूस होता है कि, किताबों में जो लिखा है, वही सिर्फ सही नहीं है, यथार्थ सत्य बहुत ही विदारक है। रीटा ऐसी ही एक विदेशी युवती है, जो वर्तमान भारत की स्थिति देखकर, स्वप्नभंग होने के दुखसे निराश हो जाती है। उपन्यासकार ने रीटा के माध्यम से यही स्पष्ट किया है कि विदेशी लोगों का, जो अपने मन में भारत की एक आदर्श कल्पना रखे हुए हैं, भारत की सद्यस्थिति देखकर किस तरह भ्रमनिराश होता है।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबंद - पृ.१०२।

२ डॉ.प्रभाकर माचवे - दर्द के पैबंद पृ.क्र.१४२।

` लक्ष्मीबेन ` की नायिका लेखा --

लेखा डॉ.माचवे जी के ` लक्ष्मीबेन ` नामक उपन्यास की नायिका है। वह एक परित्यक्ता नारी है। लेखा अपने परिवार से उखडी हुई है, परिणामत: उसे अपने व्यक्तिगत जीवन में संतोष एवं सुख नहीं मिला है। लेकिन वह आधुनिका और संकल्पवान स्त्री है जो अपने निराशामय अतीत से छुटकारा पाना चाहती है। इसी उद्देश्य से वह विभिन्न व्यावसायिक क्षेत्रों में काम करती है। लेकिन इस प्रकार से बाहरी समाज में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति कहलाने पर भी उसके अन्तर्मन की व्यथा और व्याकुलता कम नही होती बल्कि उसे और भी व्यथित बनाती है। वह अन्तत: एक व्यक्ति है,एक नारी है, जो अपने पारिवारिक सुख-स्वप्नों की पूर्ति से वंचित है। विविध क्षेत्रों में काम करने पर भी उसका मूल नारी रूप उससे अभिन्न है। इसीलिए उसे कहीं भी संतोष एवं शांति की प्राप्ति नहीं होती।

पतिद्वारा त्यागी जाने के बाद लेखा अपने एक रिश्तेदार की सहायता से कॉलेज में लेक्चरर बन जाती है। धीरे-धीरे अपनी योग्यता से वह बढती गई और रीडर तथा बाद में प्रोफेसर भी बनी। लेखा प्रोफेसर के अतिरिक्त कई अन्य पद भी, जैसे कि, समाज-कल्याण सभा की सक्रिय सदस्या,एम.एस.ए. विभूषित करती है। वह अन्त में योगिनी और लेखिका भी बन जाती है।

लेखा को संगीत में रुचि है। छुट्टी के दिन अपना प्रिय संगीत सुनने में वह अपने आपको खोने का प्रयास करती तब वह अपने आपको ज्ञान-मयी नहीं, बल्कि अधिक उदास पाती है। ` शायद ज्ञान पाने का अर्थ ही अधिक दुखी होना है।`[१] क्योंकि मस्तिष्क की इस विकसित अवस्था में उसे अपने दुख का एहसास अधिकाधिक तीव्रता से होता है।

लेखा कामकाजी और अकेली औरत है। जैसे कि कहा जाता है,` हर काम के लिए निमित्त लगता है,` लेखा के लेक्चरर बनने के लिए भी उसके जीवन में घटी एक

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.५२।

महत्वपूर्ण घटना कारणभूत रही । लेखा के विवाह के कुछ ही साल बाद उसके पति वसंत, जो एक वैज्ञानिक थे, उसके इकलौते बेटे को उठाकर चले गए । परिणामस्वरूप लेखा के जीवन में सूना पन छा गया । वह पागल होते होते बची ।

लेखा का विवाह रूढ ढंग से ` दोनों घरों की सम्मति से, जन्म पत्रियाँ मिलाकर, गृह-नक्षत्रों की ठीक स्थिति देखकर, सब आकाश-पाताल, नगर-ग्राम, पर्वत-पानी के देवी-देवताओं की मर्जी से, उनकी सम्मति से, सप्तर्षि तारकों के साक्ष्य में हुआ था।`[१] उसका पति, वसंत शुरू-शुरू में उसे सब तरह का प्रोत्साहन देता था । उसमें बुराइयाँ भी बहुत थीं । वह व्यसनी था, सिगरेट पीता, शराब की पार्टियाँ देता, दोस्त - दोस्तनें घर लाता । रात-रात भर बाहर रहता, देर तक घर नहीं लौटता। उसने लेखा से कह रखा था,` लेखा, तुम अपने मित्रों से मिलो जुलो । मुझे कोई आपत्ति नहीं । मैं अपने ( और अपनी ) मित्रों से मिलूँगा । साथ रहूँगा तुम्हें क्यों आपत्ति होनी चाहिए । सब कुछ बडी परस्पर समझदारीवाली शांतिपूर्ण सहअस्तित्व की स्थिति थी ।`[२] लेकिन अचानक कुछ ऐसा हो गया कि` सारे सपनों की सतमंजिला इमारतें ढह गईं । अब वहाँ सिर्फ खंडहर और साइयाँ हैं ।`[३]

लेखा के पति ने, जो एक ऊँचे पद पर वैज्ञानिक थे, लेखा की दुश्चरित्रता को लेकर अफवाहें फैलाईं । पुरुष के लिए यह काम आसान रहता है । चूँकि` वह बहिर्मुख होता है । पचासों लोगों से मिलता-जुलता है । उसीने यह मसलें ईजाद की -- नारी की अस्मत तो काँच का बर्तन है । मिट्टी का घडा है -- एक बार उसमें दरार पडी, तो वह कहीं का नहीं रहता ।[४] लेकिन जो पति रात-रातभर घर से बाहर रहकर मजें उडाता हो, जिसकी नैतिकता असंदिग्ध रूप से बिगडी हुई हो, उसे क्या अधिकार है कि वह अपनी स्त्री के चरित्र पर आरोप लगाएँ ? लेकिन नारी स्वभाव से अंतर्मुख है और इसी का फायदा उठाते हुए पुरातन काल से किसी भी स्थिति में दोष उसीके ही माथे पर मढा जाता है । इस सम्बन्ध में लेखा का सवाल है कि,` क्या पुरुष और

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.२० ।

२ - वही - पृ.क्र.२० ।

३ - वही - पृ.क्र.२० ।

४ - वही - पृ.क्र.३० ।

नारी के लिए दो अलग अलग नीति संहिताएँ हैं ? क्या दोनों की भूख और प्यास अलग - अलग ढंग की है ? '[1] ' ड्रामा ' की नायिका आमा भी इसी तरह का सवाल उपस्थित करती है । '[2] वर्तमान समाज में जहाँ नारी को समानाधिकार दिए जाने की घोषणा बडे जोर-शोर से की जाती है, वहीं स्त्री और पुरुष के लिए इसप्रकार दोहरे मानदण्डों की नीति अपनायी जाती है । लेकिन ' प्रकृति की ऐसी कोई मंशा नहीं थी कि, ऐसी दो नस्लें बनाई जायें -- एक छुट्टे सौंड की तरह घूमती रहे (पुरुषर्षभ और ऋषभदेव और नरपुंगव और वृष - स्कंध बडे गौरवशाली विशेषण हैं) ---' [3]

स्त्री-पुरुषों के संबंध में इसप्रकार का भेद-भाव आज ही नहीं, बल्कि पुराणकाल से अपनाया जाता रहा है । लेखा इस संबंध में सोचती है,' नारी को लेकर दया-करुणा के मगरमच्छ जैसे आठ-आठ आँसू बहानेवाले भी पुरुष ही है । और जब सूक्त लिखने का वक्त आता है तो लिखा जाता है, ' पुरुष सूक्त, नारी-सूक्त नहीं । पूर्वज - गिनाए जाते हैं तो पुरुष । भाग्य आँका जाता है तो पुरुष का - चरित्तर सिर्फ तिरिया का होता है । पुरुष तो सर्वतोभद्र हैं - शेरों के कहीं मुँह धुले है ?[4] लेकिन जब बदनामी की बात आ जाती है, तो इसका दोष नारी पर मढा जाता है । ' सारे इतिहास साक्षी हैं --- तराजू का पलडा भारी होता है, जब बुराई , दोष,कलंक या बदनामी मढी जाती है, तो वह नारी के ही सिर उसी का हिस्सा भारी है । पैर उसीका फिसलता है, और मारी भी उसीका होता है ।'[5]

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.३० ।

२ ' क्या पाप और पुण्य के बटखरे हमारे देश में स्त्री और पुरुष के लिए अलग अलग है ? '

डॉ.प्रभाकर माचवे - ड्रामा - पृ.क्र.९४ ।

३ डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.३० ।

४ - वही - पृ.क्र.३१ ।

५ - वही - पृ.क्र.३१ ।

आज भी कई अज्ञान पीड़ित लोगों में बेटी के जन्म पर शोक मनाने की प्रवृत्ति है। लेखा इस सम्बन्ध में कहती है --' यानी आज १९७६ में भी, यानी नारी मुक्ति दशक का एक बरस पूरा होने पर भी, स्त्रियों को लड़की का जन्म अशुभ लगता है .... यह हमारा' यत्र नार्यस्तु पूज्यंते, रमंते तत्र देवता' वाला देश है।'[१]

आज के कलाकारों के संबंध में लेखा सोचती है कि, वह अपनी निर्मिती से अलग-अलग हो गया है। उसके मन में' मोल-भाव' के अतिरिक्त कोई भाव नहीं है। लेखा के मन में अपने पेशे से संबंधित एक सवाल उठता है कि, ' क्या वह भी अपनी विद्या बेच रही है ?'[२] लेकिन हर व्यक्ति की कोई न कोई विवशता होती है।' अगर वसंत जीवन से न चला जाता -- यों भरी-पूरी दावत में उठकर चले जाने वाले मेहमान की तरह, महफिल में सारे साजों की तैयारी को छोड़कर भाग जाने वाले गायक की तरह .... तो वह क्यों करती यह नौकरी ?'[३] लेखा को शुरू-शुरू में इस काम में रुचि थी। युवा और किशोर मनों को संवारना अच्छा लगता था। लेकिन बाद में इस काम में यांत्रिकता आती रही। न पढ़नेवालों को रुचि रही, न पढ़ानेवालों को।' जैसे सभी कोई बोझ उठा रहे हों, एक जगह से मिट्टी-गिट्टी उठाई, दूसरी जगह पटक दी।'[४]

लेखा अपने रूप के सम्बन्ध में सोचती है कि' आईने में जो वह अपना सजा-सजाया रूप देख रही है, वह सच है ? या जब कई वर्षों पहले वसंत ने उसका हाथ अपने हाथों में लेकर ,जैसे पहले प्यार में सब फुसफुसाते हैं, वैसे, कानों में कहा था -- तुम अनिंद्य सुन्दरी हो,अप्सरा हो,उर्वशी हो, वही सच था।'[५] लेकिन वसंत का यह कथन शायद उस क्षण के लिए सही था।' अपनी सचाई को हम सदा सपनीले चश्मे में से ही देखते रहते हैं।'[६] इससे हम अपने आपसे ही धोखा करते हैं। क्षण-सत्य हमारे लिए युग-सत्य हो जाते हैं।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.४३।
२ - वही - पृ.क्र.१२।
३ - वही - पृ.क्र.१२-१३।
४ - वही - पृ.क्र.१३।
५ - वही - पृ.क्र.१६।
६ - वही - पृ.क्र.१६।

लेखा के शरीर पर बढ़ती उम्र का असर होता जा रहा है। बाल सफेद होने लगे हैं। झुर्रियों से भरा चेहरा देखकर उसे बीस साल पूर्व का चेहरा याद आता है और सोचती है कि, तब आँखों के नीचे काले वर्तुल नहीं थे, नथुनों और होठों की कोर तक की रेखाएँ नहीं थी, माहों के बीच की चिंता और त्रास से बनी झुर्रियां नहीं थीं। यद्यपि वह जानती है कि ` यौवन पारे की तरह है - अस्थिर और अब उबला, अब फिसला इस तरह ` बाजुबंद खुल खुल जाय ` - वाला। ..... दार्णिक उफान, आंधी, बिजली की कौंध -- यह सब थोड़े-से समय के खेल है।`[१] फिर भी स्त्री-स्वभाव के अनुसार अपने सफेद बाल लेखा की आँखों में खटकते हैं।

लेखा के मन में गत-जीवन की स्मृतियाँ बार-बार कौंधती रहती है। लेखा जो अतीत पढ़ाती है, अपना अतीत भूलना चाहती है। लेकिन ` मन में स्मृतियों के रक्ता-कण-इस आत्म-चिता के भस्म, बराबर अपना कोष संचित करते रहते हैं।`[२] लेखा सोचती है, कि क्या जीवन में मिली यातनाओं से कोई निस्तार नहीं ? ` सहना ही होगा, सहते रहना ही होगा। जीवन एक असहनीय अभिशाप है क्या ?`[३] वह इसप्रकार के नियतिवादी और निराशावादी विचारों से छुटकारा पाना चाहती है। इसलिए वह स्वयं को कॉलेज के अतिरिक्त कहीं अन्य क्षेत्रों में व्यस्त रखती है। अपना मूल रूप छिप जाए इस उद्देश्य से लेखा अपने आस-पास कई तरह की सामाजिक - सांस्कृतिक कार्य-क्रमावलियों का जाल बुनकर रखती है। विविध नाम लेकर विविध कार्यक्षेत्रों में वह काम करती है। ` लेखा गुप्त ` के नाम से प्रोफेसर बनती है, ` लक्ष्मीबेन ` के नाम से समाज कल्याण सभा की सक्रिय सदस्या बनती है। राजनैतिक क्षेत्र में जाकर ` सुलक्षणा देवी ` के नाम से एम.एल.ए.भी बनती है। वही योगिनी ` अन्नदाता ` और लेखिका ` ल ` भी बनती है। लेकिन ` व्यवसाय भेद से उसका मूल आधा नारीतत्व नहीं बदलता।` लेखिका के मन में उसके पाँचों पूर्व रूप बारी-बारी से चिढ़ाने लगते हैं। ` एक स्त्री, पत्नी, बहन, बेटी, माँ ... कहाँ है वह लेखा गुप्त ?

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.२३।

२ - वही - पृ.क्र.२२।

३ - वही - पृ.क्र.२२।

समाज-सेविका बनकर सबके ' लक्ष्मीबेन , लक्ष्मीबेन ,' कहकर तारीफ करने से भी वह भूल वृत्ति कहाँ छिपी ? फिर एम.एल.ए., भी बनी, योगिनी भी बनी .... पर शांति शायद कहीं नहीं ।'[१] अन्तत: वह परिवार से वंचित हो जाती है । उसकी इकलौती संतान पानी में डूबकर मर जाती है ।

लेखा के जीवन में पति के उसे छोड़कर जाने से जो आघातकारी घटना घटित हुई, उसके कारण वह अब भीतर भीतर गहरे में कहीं इतनी टूट और बिखर गई है कि किसी मेले में खोये हुए बच्चे की तरह वह अपना आश्रय स्थान खोज रही है । क्या उसका दुख, उसका अपना निर्माण किया हुआ है ? या उसपर थोपा गया है ?' [२] ' छाभा ' की नायिका आभा की भी यही स्थिति हुई है ।' [३] भारत में परित्यक्ता नारी की इसी प्रकार करुणाजनक स्थिति है । पति के सामने नारी की इच्छा - अनिच्छा का विचार नहीं किया जाता ।

लेखा अपने पति से जी जान से प्रेम करती थी । अपने बच्चे को अपना खून पसीना एक करके पाला पोसा और बढाया था । लेकिन उसका कुछ दोष न होते हुए भी उसका परिवार उध्वस्त हो जाता है । लेखा स्वयं को नियतिवादी और निराशावादी विचारों से बचाना चाहती है, फिर भी परिस्थितिवश असहाय होकर वह कहती है कि, क्या यह उसकी नियति है ? या नारी होने का अभिशाप ? या वह स्वतंत्र विचारों का व्यक्तित्व रखती थी, उस स्वतंत्रता की यह कीमत वह चुका रही है ? या वह नीतू नहीं हो सकी -- यानी इतनी अधिक संवेदनशील नहीं कि विवेक छोड़कर पागल हो जाती उसका टैक्स वह चुका रही है ?'[४] नीतू लेखा की प्रिय शिष्या थी । उसे अवांछित गर्भसे जन्मत: ही मृत बच्चा पैदा हुआ था । लेकिन वह बच्चा नाजायज होते हुए भी उसकी मृत्यु का दुख नीतू नहीं सह सकती और पागल बन जाती है । लेखा सोचती है कि वह नीतू की तरह अतिरिक्त संवेदनशील नहीं है

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.११४।

२ - वही - पृ.क्र.२८ ।

३ क्या मेरे जीवन की वेदना की उत्तरदायिनी केवल मैं हूँ ?'
डॉ.प्रभाकर माचवे - छाभा - पृ.क्र.९४ ।

४ डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.२८-२९ ।

और इसीलिए वह धीरे-धीरे मौत की ओर बढ़कर उसका टैक्स चुका रही है। पति के अलग हो जाने पर उसे अपना जीवन मृत्यु के समान ही प्रतीत होता है। इसीलिए वह विवशतावश नौकरी करने लगती है। लेकिन नौकरी का वह पहला दिन उसके बंधन का दिन था या मुक्ति का, नये जीवन का धीमी मौत का इसका निर्णय वह बरसों बाद भी नहीं कर पाती।

लेखा के मन में अपनी ही समस्या से संबंधित प्रश्न उठता है कि, ` भारत में एक परित्यक्ता, तलाकशुदा स्त्री की क्या हैसियत है ? `[१] आभा के सामने भी यही समस्या है।`[२] ऐसी अकेली कामकाजी औरत की विवशताजन्य परिस्थितियों का फायदा उठाकर लोग उनसे बहुत ही बुरी तरह से पेश आते हैं। लेखा के राजनैतिक जीवन में उसके परित्यक्ता नारी होने की वजह से उसे व्यंग्यबाण का शिकार होना पड़ता है। अन्य पुरुष नेता उसके संबंध में कहते हैं,` जो घर नहीं संभाल सकी वह स्त्री समाज और देश को क्या संभालेगी ? ` [३]

कॉलेज की स्टेनोग्राफर लड़की लेखा से बता रही थी,` बहन जी, आप इन पुरुषों को नहीं जानती - इनकी पकी उम्र हो जाये और कब्र में पाँवे लटक रहे हों तो भी इनकी तृष्णा नहीं मिटती।`[४] लेखा कहती है कि, दुनिया में इतनी बुराई है, गन्दगी, भ्रष्टाचार फैला हुआ है लेकिन न सिर्फ इनकी चर्चा करने से वह सुधर नहीं जायेंगी। लेकिन कई निष्क्रिय आराम-तलब सुधारक और तथाकथित क्रांतिकारी यही समझाते हैं कि क्रिया के बिना वाचाल होना ही काफी है .... ऐसे लोग केवल समाज को बगलदेखू बना देते हैं लोगबाग सदा शार्टिकट की संस्कृति की खोज में रहते हैं।` [५] इन्हीं के कारण साहित्य में पलायनवाद, समाज में ढोंगीपन और धर्म में रूढ़िवादिता और दंभपूजा, राजनीति में व्यक्तिपूजा और खुशामदी दरबारीपन पनपता रहता है।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.१४।

२ ` क्या मुझ जैसी परित्यक्ताओं के लिए समाज में कोई स्थान नहीं है ? डॉ.प्रभाकर माचवे - द्वाभा - पृ.क्र.९४।

३ डॉ.प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र.७१।

४ - वही - पृ.क्र.१४।

५ - वही - पृ.क्र.१५।

KHARDEKAR LIBRARY KOLHAPUR

लेखा में दो तरह की आंतरिक परस्पर विरोधी, खींचनेवाली शक्तियाँ, उसे विभाजित बनाती रहती है ` जीवन में जीने का कोई उद्देश्य नहीं, जीवन सार्थक है, उसकी गति सोद्देश्य है। जीवन में कुछ भी अपने हाथ नहीं। सब पूर्वत: सुनिश्चित है, सुनियोजित है, नियति के हाथों के हम सब कठपुतले हैं। ...`[1] इसप्रकार लेखा अन्तर्द्वन्द्व से ग्रस्त है। लेकिन लेखा उतनी ही नहीं, है जो आईने में दिखाई देती है। वह संकल्प वान स्त्री है। वह केवल नारी नहीं है, वह शक्ति भी है। नारी के नाते वह केवल श्रद्धा नहीं है, वह क्रांति भी है।`[2] इसीलिए लेखा अपने अतीत में घटित घटनाओं को भूलकर एक नए सिरे से अपनी जिन्दगी जीना चाहती है। इसी उद्देश्य से वह अपने आसपास के सामाजिक सांस्कृतिक कार्यक्रमों में स्वयं को व्यस्त रखती है कि, जिसमें उसका मूल रूप छिप जाए। लेकिन उसका दूसरा मन, जो अतीत के दु:खों से ग्रस्त है, कहता है, ` किसलिए ये सब बहस-मुबाहसे, यह वाद विवाद, यह शब्दछल, ये लंबे-चौडे व्याख्यान, ये विद्वतापूर्ण वक्तृतायें, यह लेक्चरबाजी, यह भाषणा कला के साभिनय नमूने ? किसीलए ? किसलिए ? जीवन में आघात पर आघात। पति ने छोड दिया और जैसे जीवन के ऋतु चक्र में से वसंत चला गया।`[3] अन्त में लेखिका के मन में उसके पाँचों रूप सामने आकर उसे चिढाने लगते हैं। ` एक स्त्री, पत्नी, बहन, बेटी माँ.... कहाँ है वह लेखा गुप्त।[4] लेखा को संतोष कहीं भी नहीं मिलता।

निष्कर्ष --

लेखा का जीवन ऐसी नदी के समान है, जो ऊपरसे शांतरूप से बहती हो लेकिन उसके तल के नीचे बहुत खलबली मच गई हो। प्रोफेसर लेखा गुप्त, समाज-कल्याण सभा की सक्रिय सदस्या लक्ष्मीबेन, एम.एल.ए. सुलक्षणादेवी, योगिनी अलक्षिता और लेखिका ` ल ` आदि उसके बाह्य रूप हैं, लेकिन घर में वह एक परित्यक्ता पत्नी, पुत्र होते हुए भी पुत्रहीना माता, माँ-बाप की ममता से वंचिता एकाकिनी है। माचवे जी लेखा के

---

१ डॉ. प्रभाकर माचवे - लक्ष्मीबेन - पृ.क्र. १९।

२ - वही - पृ.क्र. २९।

३ - वही - पृ.क्र. ७४।

४ - वही - पृ.क्र. ११४।

चरित्र के माध्यम से स्पष्ट करना चाहते हैं कि, एक ही स्त्री पाँच व्यवसाय या कार्यक्षेत्र चुनने पर भी अंतत: वही स्त्री रहती है। व्यवसाय भेद से उसका मूल आद्या नारी-तत्व नहीं बदलता। लेखा अपने व्यक्तिगत जीवन में अपने प्रियजनों से वंचित एकाकिनी है। वह आधुनिक विघटनवादी समाज की शिकार है। इसीलिए उसकी जिन्दगी में जो अधूरापन है, उसकी पूर्ति कहीं भी संभव नहीं है।

<u>कहाँ से कहाँ - की नायिका विभा --</u>

विभा सिंह 'कहाँ से कहाँ' नामक उपन्यास की नायिका है। विभा एक भारतीय युवती है, जो चिकित्सा विज्ञान में उच्च अध्ययन के लिए जर्मनी गई हुई है। इस सिलसिले में उसका वहाँ चार साल का वास्तव्य रहा। अध्ययन पूरा करने के बाद १९७७ में वह भारत आ जा जाती है। विभा को इस बात का बड़ी तीव्रता से एहसास होता है कि, इन दोनों देशों में विभाजन की समस्या व्यापक रूपसे दिखायी देती है। यह विभाजन न सिर्फ देश के विभाजन, घर के विभाजन तक ही सीमित नहीं है बल्कि दिल का विभाजन भी इसमें शामिल है।'[१] इसीलिए यह विभाजन विभा के मन को अवसादपूर्ण बना देता है।

विभा के परिवार को भी विभाजन की आँच लग गयी है। उसने दो बरस की बहुत छोटी उम्र में विभाजन देखा था। माँ को बच्चा होनेवाला था जिसकी जन्मत: ही मृत्यु हो गयी। इसी समय विभा के पिताजी देश के बटवारे में सन सैंतालीस में मारे गये। माँ पिताजी के मृत्यु की बात नही सह सकी। उसे भयानक सदमा हुआ था। लेकिन विभा की विभाजन की अनुभूतियाँ यहाँतक सीमित नहीं थीं, बल्कि उसे जर्मनी में और एक विभाजन देखना पड़ा।

---

१ 'क्यों होते हैं देश के बंटवारे ? घर के बंटवारे ? दिल के बंटवारे ?'
डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.१।

विभा की माताजी बंगाल से थी और पिताजी पंजाब से। लेकिन विभाजन के बाद दोनों के भी घर वहाँ नहीं रहे। और पिताजी भी मृत्यु होने से माँ दिल्ली में आकर रहने लगी। वह दिल्ली युनिवर्सिटी में मनोविज्ञान की लेक्चरर थी। विभा को बहुत छोटी उम्र में यह देखना पडा कि विभाजन के बाद कैसे लाखों निरपराध लोग अंधी सांप्रदायिक घृणा के शिकार बनें।' देश के विभाजन ने हमारे देश में लाखों घर उजाड दिए। कौमों के बीच गहरी सन्देह और घृणा की अपूरणीय खाइयाँ खोद दी गई।'[१] यह कडवा सच है कि' देश-देश के बीच में जो प्रचार के बीज बो दिए जाते हैं, उन्हें इतिहास भी मुश्किल से मिटा पाता है।'[२]

विभा का जर्मन मित्र बिल अपनी माँ से विभा का परिचय करा देता है, उससे यह ज्ञात होता है कि, विभा को संगीत में रुचि है,कविता भी करती है। अच्छे पकवान बनाती है उसकी पूर्वी देशों के दर्शन और धर्म आदि गहरे और रहस्यमय विषयों में बडी पैठ है। विभा चिकित्सा विज्ञान की छात्रा रही है। लेकिन शारीरिक रोगों के साथ उसे मनोरोगों का भी अध्ययन करना पडा है। अत: मनोवैज्ञानिक चिकित्सा में भी उसे रुचि है।

जर्मनी में जाने के बाद शुरु शुरु में विभा को घर की,माँ की याद बहुत सताती है। उसके प्रेम का एकमेव स्थान माँ है। वह चाहती है कि जल्दी से जल्दी भागकर फिर दिल्ली में पहुँच जाय और माँ से कह दे कि, नहीं करनी है, उसे यह उच्च चिकित्सा की पढाई। उसका मन करता है कि अपने देश में जाकर एक छोटे से घोंसले में दुबक जाय। वह अपने मन में कहती है,' माँ,माँ, मुझे गांधी के देश में ही रहना है, जहाँ युद्ध के विरुद्ध में आवाज उठा सकती हूँ। माँ, मुझे यहाँ कहाँ भेज दिया, जहाँ हर आदमी के बदन पर जैसे - फौजी वर्दी है और मन के भीतर एक रोमैंटिक शिलर या गोइटे तडप रहा है .... .. यहीं ' होल्डर लेन पागल हो गये

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.४१।

२ - वही - पृ.क्र.४१।

थे । और नीत्शे भी पागल खाने भेज दिये गये थे । मैं अल्फ्रेड की कविता जैसे ` अस्पतालों में जाकर मृत्यु ` के साक्षात्कार से क्या पाऊँगी मैं ? ... `[१] जर्मनी के युद्धजन्य स्थिति से विभा के मन में निराशा छाने लगती है ।

जर्मनी में चार साल के वास्तव्य के बाद भारत लौटते समय विभा के मन में जर्मनी छोड जाने का दुख भी है । यह स्वाभाविक भी है । क्योंकि चार बरस रहते रहते विभा को उस देश से कुछ ममत्व हो गया है । विभा अपने मित्र बिल से इस सम्बन्ध में कहती है, ` जिंदगी इसी प्रक्रिया का नाम है । जुडना-टूटना,और इसमें जो बचा रह जाये ।`[२]

भारत लौटने का विचार ` विभा के मन में एक ओर जहाँ अपने घर जाने का सुखद ऊष्मा पैदा करता है, वहीं एक अज्ञात आशंकायुक्त भय का सिहरन भी ।`[३] भय इसलिए कि,भारत लौटने पर कई समस्याओं जैसे नौकरी ,विवाह का सामना करना पडेगा । जीवन भर के संगी-साथी की तलाश कोई आसान बात नहीं है । वह अपनी माँ को अकेला छोड उसे दुखी बनाना भी नहीं चाहती ।

विभा के मन में अपने देश के प्रति अभिमान जाग्रत है । इसीलिए वह अपनी शिक्षा पूरी हो जाने के बाद देश को अपनी जरुरत महसूस करके भारत लौटती है । भारत लौटने के बाद उसे यह महसूस होता है,कि शहरों में कई मामले में परिवर्तन दिखाई देते हैं लेकिन हमारे ज्ञान-विज्ञान के केन्द्र परिवर्तन के मामले में शून्य और अक्रियावादी हैं । उनमें किसी किस्म की ताजगी या नयेपन को सन्देह से देखा जाता है । विभा अपने मन में आयी हुई यह बातें जुबान पर नहीं लाती, क्योंकि उस समय उसके साथ विदेशी युक्ती नजमा थी । और इसतरह की बातें करके अपने देश का अपमान करना विभा के लिए,एक परदेसिन की निगाह में अपने आपको गिराने के समान ही था ।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.८ ।

२ - वही - पृ.क्र.४० ।

३ - वही - पृ.क्र.३८ ।

मास्कर का मन पूरी तरह से पश्चिम में नहीं रमा था । फिर भी वह भारत लौटने की बात नहीं करता था । ऐसे युवकों के संबंध में विभा कहती है, ` वह क्या है जो भारतीय युवकों को यहाँ बाँध कर रखता है । क्यों वे धीरे-धीरे अपने देश की याद और उससे प्रेम भी भूल जाते हैं ? `[१] मास्कर इसका जवाब इसतरह देता है कि, वहाँ स्वतंत्रता है । हमारे यहाँ जो सहजरूप से नहीं मिलता, वही उधर सुलभ है । अर्थात् वह जीवन के क्षणभंगुरत्व को ध्यान में रखकर भोगवाद में विश्वास करता है । लेकिन विभा का मत है कि,` इन्द्रियसुख की अतिसुलभता उस सुख का नकार है ।` [२]

बर्लिन में टैक्सी से प्रवास करते समय विभा को यह देखकर आश्चर्य होता है कि ड्राइव्हर` बुलेट प्रुफ ` कांच के पीछे बैठता है और पीछे बैठे मुसाफिर एक गोल छेद से उसे पैसे दे दिया करते हैं । ड्राइव्हर मुसाफिर के साथ ` माईक ` से बोलता है । विभा के मन में सवाल उठता है कि , इसप्रकार आदमी और आदमी के बीच इतना अविश्वास कैसे पैदा हुआ ? भौतिक प्रगति इसका प्रमुख कारण हो सकता है ।` जितना विज्ञान मनुष्य को और उसके परिवेश को जानने का गर्व करता जाता है, उतना ही मनुष्य के बीच का यह सूक्ष्म सन्देह,भेद विभाजन बढता जाता है ।`[३] यह विचित्र विरोधाभास होते हुए भी सत्य है ।

विभा को बर्लिन की दीवार के निकट एक गाईड मिली, जो उसे कहती है कि, आप अनावश्यक रूप से इतिहास-पीडित है । वह एक जर्मन फिल्म की कहानी है,जिसमें एक जर्मन पिता अपने बच्चों को ` दीवार` की कहानी सुनाकर` उस पार` के लोगों के बारे में बच्चों के दिलमें घृणा की भावना पैदा करते हैं । तभी दीवार के साये में एक-दूसरे की बाहों में गूँथे किशोर-किशोरी हँसते हुए कहते हैं,` हमें भूत-प्रेतों की तरह युद्ध की कहानियाँ मत सुनाओ । हम उन्हें सुन-सुन कर अधा गये । हमें प्रेम करने को कोई भी स्थान ठीक लगता है । यह दीवार फाँद कर शहीद हुआ मूर्ख और उस की समाधि हमारे लिए कोई पवित्र-स्थल नहीं है । `[४] विभा इस प्रसंग की पार्श्वभूमि में

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.४८ ।

२ - वही - पृ.क्र.४८ ।

३ - वही - पृ.क्र.१८ ।

४ - वही - पृ.क्र.१४ ।

अपने देश के विभाजन पर सोचने के लिए मजबूर हो जाती है। उसके मन में विचार आते हैं कि भारत में भी लोग इसी तरह विभाजन की विडंबना को भूल गये होंगे ?[१] लेकिन क्या कोई भी विभाजन इतने जल्दी भूलना आसान है ? दो घरों का, दो दिलों का बँटवारा, आदमी और उसके पालतू जानवर का वियोग भी कष्टदायी स्मृतियाँ छोड जाता है। और इस नयी पीढी को इतिहास बेमानी झूठ और फरेब लगता है।

विभा के मन में सवाल उठता है कि, क्या जीवन में कुछ अर्थ है ? लेकिन जब वह भास्कर से मिलती है, जो सैलानी बनकर जर्मनी आया था, तब उसे आशा की किरण दिखाई देती है कि ` सब कुछ खंडित नहीं है। सब कुछ बिखरा छितरा नहीं है।`[२] भास्कर के घर में विभा उसके भारतीय और जर्मन मित्रों से मिलती है। वहाँ इकठ्ठा सब लोगों में जन्मस्थान, मातृभाषा, वर्ण आदि बातों में विविधता होते हुए भी उनमें आंतरिक एकता थी।`[३] विभा यह अनुभव कर आश्वस्त हो जाती है कि ` इस परदेश में भी उसे उष्मा देने वाला कोई है। वह निपट अकेली नहीं है। यहाँ कहीं दूर में इकाई की भी झालक मिलने के आसार है।`[४]

विभा और भास्कर का कलाप्रेम उन्हें एक दूसरे के निकट लाता है। विभा का मन बिल की ओर खींच रहा था लेकिन भास्कर का हृदय विभा से इतना प्रभावित था कि, विभा के सामने समस्या निर्माण होती है कि, पूर्व और पश्चिम में से किसे

---

१ ` क्या नये हिन्दूस्तान, पाकिस्तान, बांगलादेश में एक पीढी पहले की पीडा को महाकाल के ` विश्वरूप दर्शन` वाले विराट मुख ने कवलित कर लिया होगा ?`
डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.१४।

२ डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.९।

३ ` वहाँ विविध स्वरों का ऐसा स्वरमेल जमा कि सुनने वाले और गाने वाले दोनों ही एक दूसरी दुनिया में पहुँच गए। जहाँ भूल गये कि उनका जन्मस्थान कौन-सा था, उनकी त्वचा वालों या आँखों का रंग कौन-सा था, उनकी मातृभाषाएँ कौन-सी थीं, वहाँ हृदय और स्वर का समागम शाश्वत अवगुंफन में वेष्टित था।`
डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.१२।

४ - वही - पृ.क्र. ।

चुनें। उसके लिए चुनाव करना मुश्किल था। यद्यपि विमा यह बात बहुत अच्छी तरह से जानती थी कि हान्स और फ्रेडा में जो तलाक होने वाला था, उसका एक कारण मास्कर था। फिर भी विमा को यह विश्वास था कि, मास्कर आज नहीं ,कल सुधर जाएगा। लेकिन मास्कर के मन में कुछ और ही था। विमा बातों ही बातों में मास्कर के दार्शनिक भोगवादी दर्शन से परिचित होकर उससे पराङ्मुख हो जाती है।

किसी पार्टी में विमा का परिचय क्लि से होता है इस प्रकार दोनों के बीच स्नेह और परस्पर खिंचाव बढता गया। लेकिन उनकी मैत्री में शारीरिक आकर्षण या आसक्ति का कोई प्रसंग नहीं आया था। बिल अपनी माँ से विमा के साथ विवाह करने की बात करता है, तो उसकी माँ इनके विवाह में शर्त रखती है कि, विमा ईसाई बनें। अत: दोनों विवाह के विचार से पराङ्मुख हो जाते हैं। यहाँ स्पष्ट है कि, इन दो प्रेमी जनों में भी एक विभाजन का तत्व काम कर रहा था।

विमा के एक जर्मन मित्र हान्स से यह पूछने पर कि, उनके देश में इतने जल्दी विवाह और जल्दी तलाक क्यों हो जाते हैं , तब विमा को जवाब मिलता है कि, उनके देश ने बहुत बडे हादसे देखे हैं। और उसके आगे यह छोटे-छोटे हादसे कुछ भी नहीं। `सम्बन्ध-विच्छेद बहुत मामुली चीज है।`[१] इसप्रकार विमा को यह बात स्पष्ट रूप से ज्ञात होती है कि, उनमें हर चीज को युद्ध पर टालने की प्रवृत्ति बढती जा रही है, जैसे कि हमारे देश में हर बुराई,हमारी कमजोरी या अक्षमता के लिए ब्रिटीश या मुगल शासन को कोसा जाता है। हर आदमी और हर राष्ट्र अपनी कमजोरियों के पर्दा डालने के लिए बहाना चाहता है।

विमा भारत और जर्मनी की तुलना करती है, तब उसे यह बात स्पष्ट रूप से सामने आती है कि, जर्मनी में जानकार लोग प्राचीन विद्याओं-भाषाओं-मूर्तियों, हस्तलिखितों का कैसा अपूर्व संग्रह करके रखते है। लेकिन हम है कि, अपना प्राचीन गौरव भुलाकर ,मृग मरीचिका की तरह पश्चिम की चकाचौंध की ओर भागते है। इस प्रकार यह एक विडंबना है कि,` जो है उससे मनुष्य संतुष्ट नहीं है, जो नहीं है, वह

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.४३।

उसे सन्तोष का दूर से मायाजाल दिखता है। मनुष्य की गति ` है ` से ` होते जाने ` की ओर कितनी उलझी हुई है।`[१]

जर्मनी का जीवन अत्यन्त सुखद और सुविधापूर्ण होने के बावजूद भी विभा के मन में कहीं गहराई में बैठी भारतीयता के प्रति आसक्ति उसे उस नियमित सुव्यवस्थित और घड़ी के काँटों की तरह चलनेवाली जिन्दगी से जुड़ने नहीं देती थी। कुछ अपरिभाष्य-सा अभाव वह महसूस करती थी। ` कुछ बात ऐसी थी कि स्नेह,की पारस्पारिकता की वह निस्वार्थ और निरपेक्ष भूख उसे भीतर ही भीतर कचोटती थी।[२] इसी वक्त समय उसके मन में भास्कर या बिल की छवियाँ उभरती और मिटती जाती हैं। जैसे ये सब क्षणजीवी हो। उसे महसूस होता है कि, वह सिवा अपनी माँ के किसी के साथ स्थायित्व का रिश्ता नहीं जोड पा सकेगी। लेकिन उसे माँ कबतक साथ देती ? ` यौवन के साथ अपने अधूरेपन का एक जैविक अहसास भी कहीं उभर रहा था।[3] ` लेकिन विभा इसका निर्णय नहीं कर पाती कि, वह केवल शरीर की भूख थी या कुछ और। उसे महसूस होता है कि, उसके अन्दर भी कहीं विभाजन का तत्व कार्यशील है।`[४]

विभा जर्मनी के पूर्वेतिहास पर सोचते हुए कहती है कि दार्शनिकों के इस देश में जहाँ काँट,हैगेल ,शोपेनहाउर आदि महान चिन्तक पैदा हुए, वहीं क्यों गोएबेल्स, रिबन्ट्राल आदि आण्विक बम के उदगाता पैदा हुए ? लेकिन भारत में भी इस प्रकार का विरोधाभास देखने को मिलता है।`[५] अर्थात् एक ही बीज के कुछ कडुए और कुछ मीठे फल हो सकते है।

---

१ डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.५३।

२ - वही - पृ.क्र.२७।

३ - वही - पृ.क्र.२९।

४ ` उसके भीतर कहीं गहरे में उसके दोनों जन्मदाताओं माँ,बाप के विभाजित देशों में रक्तरंजित इतिहास का साक्ष्य जुडा हुआ है। वह भी कहीं आरे से भीतर-भीतर काटी जा रही है। कौन है काटने वाला ?`
डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.२९।

५ ` क्या भारत में अपने आपको उच्च कोटि के सवर्ण और ज्ञान-विज्ञान तथा अध्यात्म के पूँजीभूत मेधावी ऋषि - मुनियों की नस्ल में ही रावण और आधुनिक काल के कई राजनैतिक हत्यारे नहीं पैदा हुए ?`
डॉ.प्रभाकर माचवे - कहाँसे कहाँ - पृ.क्र.२१।

विमा जर्मनी से भारत लौटने पर हरियाणा के एक गांव में डाक्टरी करती है। गाँव में वह एक प्रसिद्ध डाक्टर बन जाती है। वहीं उसका परिचय जितेन्द्र से हो जाता है। जितेन्द्र एक आदर्शवादी नवयुवक था, जिसने ग्रामीणों की शिक्षा को अपना जीवन समर्पित कर दिया था। जितेन्द्र काफी पढा-लिखा, और भावुक हृदय का व्यक्ति था। विमा जितेन्द्र से विवाह करने का निर्णय लेती है। जितेन्द्र की जीवन पद्धति कष्टमय और सादा होने से उसके विमा को मना करने पर भी वह अपने निर्णय पर अटल रहती है और जितेन्द्र से विवाहबध्ध होती है।

भारत की सध:स्थिति के संबंध में विमा के मन में द्वन्द्व है। वह कहती है, ` क्या विवेकानन्द और रामकृष्ण, तिलक और अरविन्द का भारत आज का भारत नहीं है ? क्या आज का भारत केवल इकबाल और अम्बेडकर, जिन्ना और सावरकर का ही भारत है ? `[१] विमा कहती है कि, बंटवारा-वादी लोगों की इस लंबी सूची में आज और फिर कई नेता लोगों का नाम जोड सकते हैं, जैसे मास्टर तारासिंह, रामस्वामी नायकर, पेरियार और विविध ` सेनाओं ` के नेता लोग। बंटवारा-वादी लोगों को आज भी एक आंध्र से शांति कहाँ है ? सौराष्ट्र गुजरात से अलग करना चाहते हैं। इसी तरह वे चाहते हैं कि पुराने आसाम राज्य के पाँच छोटे प्रदेश हो गये, फिर उसका उप-विभाजन क्यों नहीं होता ? इसप्रकार की विभाजनवादी प्रवृत्ति के कारण विमा के मन में द्वन्द्व पैदा होता है कि ` विभाजन से एकता मजबूत होती है, या एकात्मकता से खंड-खंड मजबूत बनते हैं ? अंश अंशी पर निर्भर है या अंशी अंश पर ? `[२]

निष्कर्ष --

इक्कीसवीं सदी में हम जहाँ विज्ञान तथा टेक्नोलोजी में नये - नये कीर्तिमान स्थापित कर रहे हैं, वहाँ हम इस अंधी औद्योगिक प्रगति की होड में मानवता को भूलाते जा रहे हैं। समूचे विश्व में धर्म, जात, प्रांत, राष्ट्रीयता आदि बातों को लेकर अलगाववादी शक्तियाँ कार्यरत है, जो लोगों में विद्वेष के बीज बो देते हैं। विभाजन

---

१ डो.प्रभाकर माचवे - कहाँ से कहाँ - पृ.क्र.६०।

२ - वही - पृ.क्र.६०।

का विष फैलाते हैं। यद्यपि समूचि मानव जाति का हृदय एक है, भावनाएँ एक-सी हैं फिर भी ये बाहरी तत्व लोगों के दिल में विद्वेष के बीज बो देते हैं। देश-विदेश में व्यापक पैमाने पर फैली यह विभाजन की समस्या विभा के सिर में बार-बार मथती रहती है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत नायिकाओं की चारित्रिक विशेषता देखने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि, इन नायिकाओं की समस्या लगभग एक होने के बावजूद भी हर एक का अपना अलग वैशिष्ट्य है। इनके चरित्र की अपनी कमजोरियाँ हैं, अपनी कामनाएँ हैं, अपनी जीवनदृष्टि है। इसीलिए ये अपना वैशिष्ट्यपूर्ण प्रभाव पाठकोंपर जमाने में कामयाब होती हैं।

विवेच्य नायिकाओं में से अधिकतर परित्यक्ता तथा पुरुष द्वारा प्रवंचिता नारियाँ हैं। ये नायिकाएँ मानसिक, आर्थिक तथा शारीरिक आधार तथा अवलंब पाना चाहती है। लेकिन इन्हें पुरुषों द्वारा धोखा और प्रवंचना ही मिलती है। इसीलिए ये नायिकाएँ अपने अनुभवों के कारण समूचि पुरुष जाति का विद्वेष करती हैं। इनका पुरुष जाति पर से विश्वास टूटता जाता है।

यद्यपि इनमें अधिकांश नायिकाओं की समस्या एक ही है, फिर भी इनका इन समस्याओं की ओर देखने का नजरिया अलग है, जिससे हर एक का चारित्रिक वैशिष्ट्य उभरकर आता है।

'द्वामा' की आभा श्री की परित्यक्ता है। श्री ने उसे विवाह के कुछ ही साल बाद एक कन्यारत्न देकर उसे त्याग दिया है। यद्यपि वह उच्चशिक्षा प्राप्त नायिका है, फिर भी उसका मस्तिष्क प्राचीन जडवत मूल्यों में बार-बार उलझाता रहता है। आभा के प्रति श्री का आचरण निष्ठा रहित है, फिर भी आभा प्राचीन संस्कारों में जकडकर उसी की पूजा करती जाती है। उसके जीवन में आए पुरुष उसका अपनी

शारीरिक कामपूर्ति के लिए उपभोग करके उसे जीवन में अकेला तडपाते छोड चले जाते हैं। दूसरी ओर श्री कितनी ही स्त्रियों के पास अपनी काम-लालसा प्रकट करने के बाद भी समाज में प्रतिष्ठित व्यक्ति कहलाया जाता है। लेकिन आभा का सत्यकाम की ओर आकर्षित होना समाज के प्रचंड रोष एवं निंदा का कारण बन जाता है। इसीलिए आभा का सवाल है कि, स्त्री और पुरूष के लिए ये दोहरे मानदण्ड क्यों बर्ताए जाते हैं ?

आभा की यह कमजोरी है कि, वह एक भारतीय नारी है और पति द्वारा छली जाने पर भी पतिनिष्ठा निभाती है। लेकिन मन का दूसरा पहलू भी है, जो पति के अत्याचार,अन्याय सह कर विद्रोही रूप धारण किए हुए है। इसीलिए आभा अन्तर्द्वन्द्व से ग्रस्त है।

आभा भावुक एवं कमजोर है, अत: वह श्री तथा सत्यकाम से प्रेम मरे आश्वासन के बाद प्रवंचना पाकर अपने शरीर एवं मन को सँभाल नहीं पाती और मृत्यु का वरण करती है।

'एकतारा' की तारा देश-प्रेम से अभिभूत होकर अपने यौवन का अमूल्य समय स्वतंत्रता आन्दोलन के लिए जुटाती है। इसी दौरान वह यह अनुभव करती है कि,हर पुरूष नारी के प्रति 'भोग्या' की-सी दृष्टि रखता है। स्त्री के प्रति उसका प्रेम अन्तत: नाटक ही होता है , जिसके भीतर विद्रूप भोगलिप्सा छिपी हुई रहती है। इसलिए वह अकेले रहने की जी तोड कोशिश करती है, लेकिन इस प्रयास में उसे मुसीबतों का पहाड उठाना पडता है। अन्तत: वह जीवन में बहुत ही अकेलापन और स्वयं को निराधार महसूस करके विवाह करती है। लेकिन वैवाहिक जीवन में भी उसे और एक कटु अनुभव मिलता है कि, जीवन में सब रिश्ते आर्थिक हैं, अर्थ ही जीवन का सच्चा अर्थ रह गया है।

'लक्ष्मीबेन' की नायिका लेखा भी परित्यक्ता नारी है। वह अपने परिवार से उखडी हुई है, जिससे वह अपने व्यक्तिगत जीवन में असंतोषी एवं दु:खी है, लेकिन

उसके व्यक्तित्व का दूसरा पहलू भी है, जो उसे अपने निराशाजन्य अतीत से छुटकारा पाने की प्रेरणा देता है। वह आधुनिका एवं संकल्पवान नारी है, इसलिए वह विभिन्न कार्य क्षेत्रों में विविध अधिकार के पद विभूषित करती है, और अपनी आंतरिक पीडा, यातना एवं दर्द बाहरी समाज से छिपाने की कोशिश करती है। लेकिन पारिवारिक प्रेम तथा सुखस्वप्नों की पूर्ति से वंचित लेखा अपने आपसे ही प्रतारणा करने के प्रयास में दोहरा जीवन यापन करते हुए, अन्तर्द्वन्द्व से ग्रस्त हो जाती है।

' कहाँ से कहाँ ' की नायिका विमा का व्यक्तित्व इन पूर्व नायिकाओं से अलग है। यह देश-प्रेम तथा विश्व-बंधुत्व की भावना से अभिभूत है। इसीलिए घर और देश ही में नहीं, बल्कि मानव-मन में भी विभाजन की प्रवृत्ति देखकर विमा का मन अवसादपूर्ण एवं निराश हो जाता है।

विमा उच्चशिक्षिता नारी है। वह आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र है। उसका वैवाहिक जीवन आदर्श है। उनके वैवाहिक जीवन की ओर देखकर यह बात अभिलक्षित होती है कि, दोनों को अपने व्यक्तिगत जीवन में निर्णय लेने का पूरा हक है, दोनों, में प्रेम, सामंजस्य एवं परस्पर त्याग की भावना मौजूद है। अतएव वे दोनों आदर्श पति - पत्नी कहे जा सकते हैं।

प्रस्तुत नायिकाओं के चरित्र के अध्ययन के बाद निष्कर्ष रूप से हम यह कह सकते हैं कि, माचवे जी के इन उपन्यासों की नायिकाएँ नारी-जीवन की चिरन्तन एवं ज्वलंत समस्याओं का उद्घाटन करती है, और समाज के सामने यह प्रश्न उठाती हैं, कि, स्त्री-पुरुष समानाधिकार के युग में आज भी नारी की स्थिति किस तरह दयनीय और करुणाजनक बन कर रह गयी है। नायिका विमा के सामने भी एक समस्या है। वर्तमान विघटनात्मक स्थिति में मानवजाति के अस्तित्व को धोखा निर्माण हो गया है, इसलिए वह चिंतित है।

..